कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

वेदाङ्ग पुस्तकालय, वाराणसी।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ सिद्धान्तशतकम्

भाषाभाष्यसहितम् ।

॥ श्लोकः ॥

नत्वास्वेष्टगुरूतथांध्रियुगलम् श्रीमात्पितुः सत्सताम्
गण्यस्यामलवेदवेद्यविदुषः सिद्धान्तकर्तुः सतः ॥
तज्जोऽनन्तइतिस्वतातरचितग्रन्थस्यभाषांमुदा-
बालानांसुखबोधनायकुरुतेध्यात्वाचवागीश्वरीम् ॥१॥

॥ दोहा ॥

करौं प्रणाम शिव गौरि सुत गणपति चरण उदार ॥
जेहि सुमिरे अघ भागहीं सफल होत मन कार ॥ १ ॥
पितृरचित वेदान्त कौ भाषा वर्णत देव ॥
करो अनुग्रह जाहि बस लहौं रचन के भेव ॥ २ ॥
देखि अपार विशाल जग चकित हृदय भा जाहि ॥
सोइ कहत पहिले वचन देव देव मोहि पाहि ॥ ३ ॥

॥ श्लोकः ॥

पाहिपाहि जगन्नाथ देहिदेहि निजां मतिम् ।
कोस्मिकोस्मि मृषालोकेकोसिकोसि नलक्ष्यसे ॥१॥

॥ अर्थः ॥

हे जगन्नाथ हमार रक्षा करु रक्षा करु अरु अपन मति दिहु काहे कि यह मिथ्या संसार में हम केहोर उभा से हो लक्षित होये एतदर्थं अपन मति दिहु जेह से अपन रूप रा रूप बुझ परे।

॥ श्लोकः ॥

अवश्यमसिदृश्येश कर्ता कर्मोद्भवोभवेत् ॥
स्वतोभवतुवाथास्मिन्वैचित्र्यंकेननिर्मिम् ॥ २ ॥

॥ अर्थः ॥

पूर्व में हे जगन्नाथ इ सम्बोधन ते बुझपर हय कि जगत नाथ केउ हय ते हमें कदाचित् अइसन कहो कि कैसे जानह केउ नाथ है एतदर्थं कहें है कि हे 'दृश्येश' दृश्य संसार के स्वा अवश्य रउआ के उही काहे कि संसार कर्म है कर्म विना क के न होय बहुत नास्तिक जन कह हैं कि संसार स्वतः अना हो है पुनः नाश के प्राप्त हो है तेकर खण्डन कर हैं कि स्व संसार होय परन्तु यह में विचित्रता के निर्मान के केल विचित्र बिना कर्ता के न होय स्वतः जो हो इत तो एके रंग के हो अनेक विधइ संसार न होइत।

॥ श्लोकः ॥

अहोजगत्पतेतेहंशक्तिंबुद्धास्मिकिङ्करः ॥
याग्रहेणनलोकेषुकरोत्येकविधंसुखम् ॥ ३ ॥

॥ अर्थः ॥

पूर्व श्लोक से इ सूचन भेल कि विचित्रता केवल परमेश्वर

यह से अपनाते अधिक विचार करके कह है कि 'अहोजगत्पते' जगत के पति शङ्कर शक्ति बुझ के विचार करके "हम" शङ्कर ङ्कर हो रहलहि यो रङ्गा कहीं कि कौन शक्ति बुझल तहां कहे है कि ये शङ्कर शक्ति आग्रह करके संसार में एक रंग के पुरुष न करे यद्यपि जितना जोव उत्पन्न हो है सभ के भिन्न २ रंग मुख हो है एक रंग के न होय ॥ ३ ॥

॥ श्लोकः ॥

लीलाभवतुपश्येयामितिकांक्षामयेश्वरः ॥
कालनामाततोविश्वमीदृशंपरिवर्त्तते ॥ ४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब एह श्लोक में ईश्वर के काल रूप से परिचय कहे हैं। ...ार के पूर्व तो केवल ब्रह्म नाम भर रह है। जब ओही ब्रह्म ...अइसन कांच्छा उठ है कि अब संसार होय तब यही कांच्छा ...के ईश्वर अइसन नाम हो है से ईश्वर के काल रूप कह है ...अब कुछ लीला होय हम देखीं अइसन इच्छा युक्त ये ईश्वर ...सेइ काल नाम है अर्थात् संसार होय के कांच्छा यह अवसर ...हो हैं ओह अवस्थ में ईश्वर के काल नाम होय है ततः नाम ...ह ईश्वर के दृष्टि सेइ दृश्य नाम अइसन अइसन देखाइत है ...ार तइसन परिवर्तते नाम पुनः हो है ॥ ४ ॥

॥ श्लोकः ॥

संसाररचनायोग्यायाशक्तिः प्रकृतिस्तुसा ॥
तत्रसत्ताप्रदोयोसौक्षेत्रज्ञः पुरुषश्चसः ॥ ५ ॥

॥ अर्थः ॥

अब प्रकृति अरु पुरुष (१) को परिचय दे है कि संसार
रचना करे में योग्या नाम समर्था जे कोनो शक्ति है परमेश्वर
सेइ प्रकृति कहाव है अरु तेहि (२) प्रकृति में सत्ता को देनिह
जे है सेइ चेतन्न अरु पुरुष (१) कहावे है ॥ ५ ॥

॥ श्लोकः ॥

प्रकृतेस्तुविभेदेनपुरुषोनेकईयते ॥
नारायणः समस्तज्ञोव्यस्तज्ञाः सर्वजन्तवः ॥६॥

॥ अर्थः ॥

पूर्व में पुरुष अइसन कहल से पुरुष एक है अथवा अनेक
इ सन्देह को निवृत्ति कर है कि प्रकृति जे है माया ते करे वि
से पुरुष जे है जीव से अनेक बुझ परे है तहां अइसन भेद
कि बुद्ध्यादि पञ्चभूत पर्यन्त सभ माया है यही सभ के र
शरीरादि के भेदते जीव भिन्न २ बुझा है पुनः माया द्विविधा
विद्या रूपा अविद्या रूपा तेही भेदते ईश्वर जीवको कुछ भेद
है कि नारायण जे ईश्वर से समस्तज्ञ है नाम समस्त संसार
ज्ञाता है अरु सभ जन्तु जे है से व्यस्तज्ञ है नाम अपन ये
व्यवहार भर जाने है ॥ ६ ॥

॥ श्लोकः ॥

एवंकार्य्यविभेदेनकारणस्याप्यनेकता ॥
नाममात्रन्तुतत्कार्य्यसत्यांचिद्ब्रह्मकारणम् ॥ ७ ॥

॥ अर्थः ॥

पुनः यही रीति से ब्रह्म को भी अनेकता अरु सत्यता है

है कि एवं नाम अइसन हो जैसे माया के भेदते जीव भिन्न पर है अइसहीं कार्य के भेदते कारण के भी अनेकता है कार्य र है कारण ब्रह्म है यह ते कह है कि कार्य जो है से नाम है नाम असत्य है नासै भर है. अनुचित् नाम चैतन्य ब्रह्म है कारण से सत्य है ॥ ७ ॥

॥ श्लोकः ॥

तद्ब्रह्मसाक्षिभूतंचित्सईशस्सर्वशक्तिभृत् ॥
सजीवोयोभिमानेनसुखीदुःखीप्रतिक्षणम् ॥ ८ ॥

॥ अर्थः ॥

पूर्व के प्रसंग से ब्रह्म ईश्वर जीव तीन भेद बूझ परल तेकर चय. कहे हैं कि "तद्ब्रह्म" नाम से इ ब्रह्म है कौन तहां हैं साक्षी भूत चित् कहीं चैतन्य जो है सेइ अरु स ईशः नाम ईश्वर है जे सर्वशक्तिभृत् नाम संसार के उत्पत्यादि करे के स्त शक्ति के धारण कर्ता जो है अरु सजीवः नाम सेई जीव कौन कि जे अभिमान करके नाम सभ कार्य के कर्त्ता हम हो र इ सभ वस्तु है सुख दुःख हमरे हो है अइसन अभिमान (१) तिच्चण सुखी दुःखी जे है ॥ ८ ॥

॥ श्लोकः ॥

विनामनस्तुयोवेत्तिविषयान्सकलेन्द्रियैः ॥
सोन्तर्य्याम्यत्रविज्ञेयः सजीवोमनसातुयः ॥ ९ ॥

॥ अर्थः ॥

पूर्व ब्रह्म ईश्वर जीव तीन भेद कहल तेह में ब्रह्म जो है से

तो निराकार चिद्रूप से सर्वत्र पूर्ण है ईश्वर जे है से भो ए
रूप से सभ प्राणी के हृदय मे अखण्ड वास कैले है ओहो ईश्व
के प्रति विरुद्ध बुद्धि में जे है सेई जीव है ओहो ईश्वर जीव
रूप भिन्न २ निज शरीर में युक्ति से अनुभव करावे हैं कि वि
मन के जे सकल इन्द्रिय करके तत्तत् इन्द्रियन के जे विषय
ते कराके बुझ है सेई अन्न कहीं यह शरीर में अन्तर्यामी विद
है नाम जानै योग्य है अरु सजीवः सेइ जीव है कि जे मन
नाम मन द्वारा इन्द्रि सभ से विषय के बुझ है यह मैं भाव अ
मन है कि जेसे कैउ कुछ कहल कते कराके मन दे के जे सुन
से तो जीव है अरु जब मन कहुई दूसरा वस्तु पर है तेह अव
में केउ कुछ बोलल ओकरा के जे श्रवण करके ज्ञाता जे है
अन्तर्य्यामी ईश्वर है ॥ ९ ॥

॥ श्लोकः ॥

सत्यस्तुपरमात्मात्रयोन्तर्य्यामीनिगद्यते ॥
जीवोमायामृषादेहेहंकारीव्यवहारवान् ॥ १० ॥

॥ अर्थः ॥

अब जीव ईश्वर के वस्तुतः अभेद देखावे हैं कि अत्र नाम
शरीर में सत्य तो परमात्मा जे है सेई है जे अन्तर्य्यामी अइ
कहावे है अरु जीव जे है से माया नाम मिथ्या है मृषा देह
अहङ्कारी अनेक व्यवहार से संयुक्त अइसन जे जीव है से मि
है यह में अइसन भाव है कि वस्तु तो जीव ईश्वर एकै है
अइसय संज्ञा अरु जीवत्व मिथ्या है ॥ १० ॥

॥ श्लोकः ॥

चक्रवातायथावाताद्धूलीपत्रादिभिः सह ॥
उद्भ्रताजीवजातानिसूक्ष्मस्थूलैस्तथेश्वरात् ॥ ११ ॥

॥ अर्थः ॥

अब दृष्टान्त सहित उपाधि भेद से जीव के ईश्वर से पृथकता उपाधि निवृत्ति से जीव के ईश्वर रूपता दु स्लोक से कहे हैं जैसे शुद्ध जे वायु है तेह से धुरी पत्रादि के साथ चक्रवात वौंडरा उद्गत हो है नाम उत्पन्न हो है तेसे ही जितना जात है से सूक्ष्म बुद्धि महत्वादि स्थूल पञ्च भूतादि यह सभ त ईश्वर से उद्गत होय हैं उत्पन्न होय हैं ॥ ११ ॥

॥ श्लोकः ॥

चक्रवातेशमंयातेनिर्विकारोयथानिलः ॥
चेत्तवृत्तौप्रशान्तायांतथाजीवः स्वरूपभाक् ॥ १२ ॥

॥ अर्थः ॥

अब द्वितीय स्लोक में एकता कहे हैं कि जैसे चक्रवात जे है न करत बायु से जब शान्त हो है तब निर्विकार अनिल हो नाम शुद्ध पूर्ववत् ओही वायु हो जा है तेसे चित्त वृत्ति जे है क से जब प्रशान्त हो है तब वो कराशान्त भेला सन्ता जीव प भाक् होय है नाम स्वरूप जे है ईश्वर तद्रूप होजा है ॥ १२

॥ श्लोकः ॥

सूक्ष्मस्यस्थूलयोगेनवियोगेनजनिर्मृतिः ॥
मुक्तिश्चिदात्मबोधेनतयोर्निरभिमानतः ॥ १३ ॥

॥ अर्थः ॥

अब जन्म मरण जो कहावे है तेकर भेद देखाव है कि स
जो शरीर है से शरीर के जब स्थूल शरीर से योग होय है
सूक्ष्म शरीर जब स्थूल में आवे प्राप्त हो है तब वो ही जनि नाम
जन्म कहाव है अब जब सूक्ष्म के स्थूल से वियोग हो है
मृति नाम मरण कहावे है मुक्ति जो है से तो लयोः कहो
है स्थूल सूक्ष्म दुनों शरीर ओह दुनों से जब निरभिमान हो
के चित् चैतन्य जो आत्मा हैं,तेकर जब बोध स्वा है तब हो है ॥

॥ श्लोकः ॥

मायाकर्पाशसूत्रं णांगुणानांघसनंजगत् ॥
चित्रितंविविधैरूपैर्भातिवोधात्मनीश्वरे ॥ १४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब संसार के वस्त्र रूप से वर्णन करे हैं कि माया जो है
है कपोस नाम कपास है ओहो माया ते है उत्पन्न जो है
सभ से है सूत है ओहो गुण सूत के जगत जो है संसार सेई
नाम वस्त्र है से कैसन है विविध जो रूप हैं से चित्रकारी
तेह से चित्र नाम चित्रकारी कैल है सेइ वस्त्र बोधात्मा
बोध स्वरूप जो है आत्मा ईश्वर तेकरा पर भास है नाम
है ॥ १४ ॥

॥ श्लोकः ॥

चित्तामात्योमनोदूतोहृषीकैः किङ्करैर्धिया ॥
पत्न्याशब्दादिदेशानांराजाबोधोविराजते ॥ १५

॥ अर्थः ॥

अवबोध रूप जो है आत्मा ते के करा राजा रूप से वर्णन करे हैं कि चित्त मन्त्री मन नाम कर के दूत इन्द्रि सभ किंकर धौ नाम बुद्धि सेइ पती यह सभ से युक्त शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध इहे जे पांच विषै है "सेइ पांच देश है एही पांचों देश के राजा अवबोधजे है से विराजे है" ॥ १५ ॥

॥ श्लोकः ॥

एकएवजगच्छाखीबोधदारुमयोमहान् ॥
विषयैः फलपुष्पाद्यैरनित्यैः शोभितोद्भुतः ॥ १६ ॥

॥ अर्थः ॥

अब यह संसार के वृक्ष रूप वर्णन कर इत युक्ति से अर्थात् अष्टया कहे है कि एक एव नाम एके गो महान बड़ा गो जगच्छाखी नाम संसार वृक्ष अद्भुत शोभित है कइसन वृक्ष है कि बोध जे है सेइ तो दारु कहीं काष्ठ है तेइ से पूर्ण है अरु अनित्य जे है विषय सभ सेइ फल पुष्पादिक है तेह से अद्भुत शोभित है यह में अइ सन भाव है कि वृक्ष अइसन जे कौनो नाम है सेइ तो जगत है अरु समस्त वृक्ष में पूर्ण जे काष्ठ है से बोध है अरु विषय सभ जे है से फल पुष्पादिक है तो फलादिक जे है से तो सदा न रहे है एहते फलादिक स्थान ने जे विषय सभ है से मिथ्या है अरु वृक्ष अइसन जे कौनो नाम है से भी मिथ्या है काहे कि वृक्ष तो कुछ वस्तु न है सभ काष्ठे है एहते काष्ठ में जैसे वृक्ष नाम मिथ्या है तैसे पूर्ण बोध जे काष्ठ है तेह में जगत नाम मिथ्या है ।

॥ श्लोकः ॥

एकमेवजगत्सर्वंशुद्धबोधात्मकंमृषा ॥
नामरूपादिभिर्भेदैर्दृश्यतेशाखिदारुवत् ॥ १७ ॥

॥ अर्थः ॥

पूर्व में जे भाव कहलौ सेही दृष्टान्त सहित कहै हैं कि शुद्ध बोधात्मक नाम शुद्ध बोध स्वरूप ई सम्पूर्ण जगत् एकौ है अनेक न है परन्तु मृषा नाम मिथ्या जे हैं नाम रूपादि भेद तेही कर के भिन्न २ अनेक देख परै है दृष्टान्त कहै हैं कि "शाःखिदारुवत्" नाम शाखी जे है वृक्ष तेकर दारु जे काष्ठ ते करा सदृश एतह में ऐसन भाव है कि जेसन वृक्ष के जे काष्ठ है से स्कन्धशाखा इत्यादि नाम रूप के भेद से अनेक देख परै है ते सही संसार ॥ १७ ॥

॥ श्लोकः ॥

ज्ञानकाष्ठस्यसंसारतरोर्नानाविधाजनाः ॥
शाखाइवोद्गताभ्रान्तिविषयैः पल्लवादिभिः ॥१८॥

॥ अर्थः ॥

अब जन सभ के शाखा रूप से वर्णन करै हैं कि जेसे शाखा पल्लवादि सहित उत्पन्न हो है तैसे विषय रूप पल्लवादि सहित नाना विध जन जे है से जानै है काष्ठ जेह में ऐसन जे है संसार तरु ते कर शाखा के सादृश्य उद्गत नाम उत्पन्न सोभ इत है ॥१८॥

॥ श्लोकः ॥

ज्ञानस्वरूपीसर्वत्रपरमात्माविराजते ॥
स्वशक्त्यानिर्मितेस्वस्मिन्स्थूलसूक्ष्मसमुच्चये ॥१९॥

॥ अर्थः ॥

अब पर मेश्वर को ज्ञान रूप से सर्वत्र वर्णन करें हैं कि यावत जे है स्थूल सूक्ष्म को समुच्चय नाम समस्त संसार से कइसन है कि स्वशक्त्या नाम अपन शक्ति कर के स्वस्मिन् नाम अपने स्वरूप के विषय निर्मित है नाम रचना कैल है तेह में सर्वत्र ज्ञान रूपी जे परमात्मा है से विराज इत है ॥ १९ ॥

॥ श्लोकः ॥

ज्ञानमेवपरंब्रह्मपरिपूर्णस्थिरंसुखम् ॥
अनित्यतास्तिवृत्तीनांज्ञानंत्वेकरसंसदा ॥ २० ॥

॥ अर्थः ॥

अब ज्ञान के ब्रह्म नाम कर के परिपूर्णता कहै हैं कि ज्ञान जे है सेही पर ब्रह्म है से कैसन है कि सर्वत्र परिपूर्ण अरु स्थिर सुख आनन्द रूप है कदाचित् संदेह होय काहे कि जब वस्त्र को ज्ञान है तब घट को ज्ञान नहीं है एवं प्रकार से दिन राती में अनेक ज्ञान होए है कइ से ज्ञान के स्थिर ब्रह्म कह है तहां कहै हैं कि ज्ञान अनित्य न है किन्तु वृत्ति सभ के अनित्यता है ज्ञान तो सदा एकरस रहै है अरु अनेक के नाश होहै एह में ऐसन भाव है कि जब वस्त्र नेत्र के सन्मुख आएल तो वस्त्राकार होय जब वस्त्र भिन्न हो गेल अन्य वस्तु आयल तब ओइसने वृत्ति भेल पूर्व वृत्ति नष्ट हो गेल एवं प्रकार से सभ में वृत्ति उठै है अरु नाश है ज्ञान तो बोध रूप है से बोध तो सदा स्थिर रहै है ॥ २० ॥

॥ श्लोकः ॥

ज्ञानात्मनिस्थिरेपूर्णेशरीराणिभ्रमन्तिहि ॥
व्योम्नीवनशरीरेणचलत्यात्मेतिसाध्यताम् ॥ २१ ॥

॥ अर्थः ॥

अब ज्ञानात्मा के स्थिर भावना करै कहै हैं कि ज्ञान रूपो आत्मा जो है से स्थिर पूर्ण हैं ओही मे शरीर सभ भ्रमण कर है। शरीर के साथ आत्मा न चलथ । इति साध्यतात् नाम सदा अइसने साधन कर । दृष्टान्त कहै हैं कि व्योम्नीवः जइसे व्योम आकाश तो न चले किन्तु आकाशे मे शरीर सब चलै हैं तइसही आत्मा मे सदा भावना करै ॥ २१ ॥

॥ श्लोकः ॥

तादृक्किंकार्य्यमस्त्यात्मासाक्षीयत्रनविद्यते ॥
कार्य्येप्रतिक्षणंनष्टेज्ञाताशुद्धस्तुसर्वदा ॥ २२ ॥

॥ अर्थः ॥

अब आत्मा के साक्षत्व वर्णन कर हैं कि ऐसन कौन कार्य है कि जो हमे आत्मा साक्षी न है अरु कार्य जो है से प्रति क्षण है नष्ट हो है ओह कार्य के ज्ञाता जो है से तो सर्वदा सब काल में रहे हैं ॥ २२ ॥

॥ श्लोकः ॥

चैतन्यार्कप्रकाशोयमाकाशोयोवगम्यते ॥
तत्रैवमृगतृष्णभंसर्वमन्यत्प्रदृश्यते ॥ २३ ॥

॥ अर्थः ॥

अब संसार को मृगतृष्णावत वर्णन करते हैं कि चेतन्य जो है सोइ तो अर्क नाम सूर्य्य हैं से सूर्य्य के प्रकाश जोई आकाश है तन्नैव कहीं तेहि आकाश प्रकाश में मृग तृष्णा के सदृश अन्य जेतना जे संसार है से देख पर है ॥ २३ ॥

॥ श्लोकः ॥

नास्तिबुद्धिरहंकारोमनश्चित्तेन्द्रियाणिच ॥
दृश्याध्यासेनसद्वोधादुद्गताःप्रतिविम्बवत् ॥ २४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब बुद्ध्यादि की उपाधि सङ्ग ते उत्पत्ति दृष्टान्त सहित कहे हैं कि बुद्धि अहंकार मन चित इन्द्रिय ई सब एको न है परन्तु दृश्यध्यासेन नाम दृश्य जे है विषय तेकर अध्यासे नाम सङ्ग्से सद्बोध स्वरूपते बुध्यादि उद्गात हो हैं नाम उत्पन्न हो हैं दृष्टान्त कहे हैं कि प्रतिविम्ब के सदृश जइसे पहिले प्रति विम्ब न रहैं जब दर्पण अथवा जलादि के संयोग हों है तब अपने रूप से दर्पणादि में प्रति विम्ब उत्पन्न हो है तइसहीं विम्ब जो वोध रूप से हैत के वास-ना से भास है ॥ २४ ॥

॥ श्लोकः ॥

एकएवसुखीदुःखीज्ञोऽज्ञश्चेतत्कुत्रसत्यता ॥
याजड़ान्यवशाशक्तिः कुतस्तत्रापिसत्यता ॥२५॥

॥ अर्थः ॥

अब एक श्लोक में जीव अरु शक्ति जे है माया ई दूनो में अस-

त्यता देखा के पुनः एक श्लोक में केवल ब्रह्म की सत्यता कहे हैं कि एकी जि हे जीव से जब कवहीं सुखी कवहीं दुःखी कवहीं ज्ञानी कवही अज्ञानीं जब हे तब कहा सत्यता है अरु जे सक्ति माया जड़ है अर्थात दोनों अरु अन्य वस हे तब ओहमे भी कहां सत्यता है माया जड़ मिथ्या है ॥ २५ ॥

॥ श्लोकः ॥

अतस्सर्वमिदंमायासत्यंचिद्ब्रह्मकेवलम् ॥
साक्षिभूतमधिष्ठानंसर्वकारककारणम् ॥ २६ ॥

॥ अर्थः ॥

अब ब्रह्म को सत्य वर्णन कर हैं कि जब जीव अरु शक्ति सत्य न है अतः कही ई सब जे है से माया हे नाम मिथ्या है सत्य तो केवल चैतन्य ब्रह्म जे है सेह हैं से ब्रह्म कइसन हैं की साक्षी हैं अरु सब के अधिष्ठान नाम आधार हैं अरु सर्व कारक नाम जेतना जे हे वस्तु तेह सबके कारण है ॥ २६ ॥

॥ श्लोकः ॥

मायाक्षुधाभोजनमन्नजातंमायाशरीराणितथासुतासिः ॥
अध्यासमूलानिविभांतिनूनंचित्तेन्यलग्नेनहिभानमेषाम् ॥

॥ अर्थः ॥

अब क्षुधादिक जे सत्यवत् हे ते कराके भी युक्ति से मिथ्या कहे हे कि क्षुधा अरु भोजन अरु जेतना अन्न जाति हे से अरु शरीर अरु प्राण के तृप्ति ई सभ माया नाम मिथ्या हय काहे कि क्षुधादिक जे है से अध्यास मूल है नाम यह सभ मे जब चित्त

के संग हो है तब ही ई सभ बुझ पर है काहि कि जब चित्त अन्य वस्तु में लगल रह है तब वह काल में इ क्षुधादिक के भान नाम प्रतीत नहोय है ॥ २७ ॥

॥ श्लोकः ॥

क्वचित्तुदुःखरूपेणसुखरूपेणवाक्वचित् ॥
विभातिमोहिकामिथ्यासामायाकथिताबुधैः ॥२८॥

॥ अर्थः ॥

अब लक्षण द्वारा माया के निश्चय कर हैं कि कब हि तो दुख रूप से कवहि सुख रूप से जे बुझ परे अरु मोहिका नाम मोह है वे अरु मिथ्या होय अइसन लक्षण युक्त जे जे वस्तु है वे-करे के बुध पंडीत लोग माया निश्चय कर है ॥ २८ ॥

॥ श्लोकः ॥

राधासीतारमादुर्गायाएताजगदम्बिका ॥
नासुमायाभिधानांहिचिद्रूपाब्रह्मसंज्ञिकाः ॥२९॥

॥ अर्थः ॥

अब राधा सीता इत्यादि विषे माया शब्द जे कह हे ते कर निषेध कर हैं कि माया तो मिथ्या कहाव है यह ते राधा अरु सीता अरु लक्ष्मि अरु दुर्गा ई जे जगदम्बिका हैं नाम जगत के माता हैं इनका विषे माया भिधान नाम माया कथन न है किन्तु चिद्रुप हैं ब्रह्म अइसन संज्ञा है राधादिक के ॥ २९ ॥

॥ श्लोकः ॥

अज्ञानादवुधाः केचिद्वदन्तुनाविचक्षणाः ॥
वदिष्यन्तिनृषुस्त्रीषुतत्वभेदंकदापिवै ॥ ३० ॥

॥ अर्थः ॥

अब स्त्री अरु पुरुष यह दूनो में भेद अज्ञानता कर के है सेइ कहत हैं कि अज्ञानता से अवुध नाम अविवेकी जे केउ है सेऊ नाम पुरुष मैं अरु स्त्री में तत्व भेद कहत हय परन्तु जे विचक्षण हैं नाम पण्डित हैं विवेकी हैं से कदापि नाम कबहो पुरुष स्त्री मैं तत्व भेद न कहतन ॥ ३० ॥

॥ श्लोकः ॥

ज्वलिताग्निशिखात्माहंमत्प्रभेन्द्रियजातयः ॥
विषयेन्धनजोधूमोदेहादिसकलंजगत् ॥ ३१ ॥

॥ अर्थः ॥

अब आत्मा के अग्नि रूप से वर्णन कर है कि ज्वलित नाम लहरत अग्नि के सदृश आत्मा हम ही अरु इन्द्रिय सब जे हैं से हमर प्रभा है अरु विषय जे है से इन्धन है नाम काष्ठ है तेकरा संयोग ते उत्पन्न जे है धूम सेई देहादि समस्त जगत है॥ ३१ ॥

॥ श्लोक ॥

ममेयमिदृशीशक्तिः शान्तस्यसुखरूपिणः ॥
विभातिवहुधाक्लेशकर्म्मरूपगिरादिभिः ॥ ३२ ॥

॥ अर्थः ॥

अब रूप वदन इत्यादि सब के अपन शक्ति रूप से वर्णन कर

हैं कि शान्त सुख रूपी हमहीं हमरे अहंसन इ शक्ति है सेई लोक अरु कर्म अरु रूप गिरा नाम वचन इत्यादि बहुत रूप से विभाति नाम भास है ॥ ३२ ॥

॥ श्लोक ॥

विजानामिमृषासर्वंविचित्रंममामायया ॥
मय्येवरचितंज्ञानस्वरूपेस्वप्नविश्ववत् ॥ ३३ ॥

॥ अर्थः ॥

अब ज्ञान जो है निज रूप तेही में संसार की रचना दृष्टान्त सहित कह हैं कि ई जेतना जो मिथ्या नाम झूठ विचित्र नाम अनेक रङ्ग वस्तु है से सब हमरी माया करके ज्ञान स्वरूपी जो ह-मही सोई हमारे रूप में रचित हैं दृष्टान्त कह हथ कि स्वप्न विश्ववत् नाम स्वप्नावस्था के संसार के सदृश जइसे स्वप्न में जो विश्व संसार देख पर है से अपने रूप में रचित है काहे की ई जो संसार है से तो जाग्रत अवस्था मे देख पर है तइ सही ई सं-सार है ॥ ३३ ॥

॥ श्लोकः ॥

येनबोधेनजानामिहृषीकैर्वोजगद्यथा ॥
तथैवनिजदेहंचकथंनानोतिमेभ्रमः ॥ ३४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब युक्ति से भेद भ्रम के निवृत्ति कर है कि जेह बोध करके अरु जेह इन्द्रि करके जइसे जगत के जानहो तइसहीं निज देह

के भि जानही तब नाना नाम अनेक भेद भ्रम हमरा कहु से हो है ॥ ३४ ॥

॥ श्लोकः ॥

नाहंस्थूलशरीरोस्मियस्मात्स्वप्नेदृश्यते ॥
तच्चेदानींनपश्यामिसत्यंज्ञानमहंध्रुवम् ॥ ३५ ॥

॥ अर्थः ॥

अब स्थूल सूक्ष्म दु जे शरीर भेद है तेह ते भिन्न नित्य निज रूप कहु हय कि हम स्थूल शरीर नहीं नाम स्थूल शरीर हमर रूप नहीं काहे कि यते वें स्वप्नावस्था मे न देख परे तब कदाचित कहि को स्वप्नावस्था के जे शरीर है सेहु हमर रूप हैं सेभि न छक सको काहे कि मुहो शरीर इदानीं नाम जाग्रत काल मे न देखो तस्मात ध्रुव नाम अचल सत्य ज्ञान रूप हम ही यते वें ज्ञान जे हम सेहु सभ काल मे एक रस रहइ ॥ ३५ ॥

॥ श्लोकः ॥

नसुखेनममार्द्धिः स्यान्नचदुःखेनवाक्षतिः ॥
ज्ञानरूपस्यनित्यस्यमुद्वयोद्वेजनंवृथा ॥ ३६ ॥

॥ अर्थः ॥

अब ज्ञान रूप निज रूप में सुख दुःखादिक न है से कहु हैं कि सुख करके हमर ऋद्धि नाम वृधि न है अरु दुःख करके क्षति नाम भी न है काहे की हम हर्ष ज्ञान रूप ही अरु नित्य ही अइसन स्वरूप जे हमही ते करा मुत नाम हर्ष अरु भय अव उद्वेजन नाम उद्वेजन दु सब वृथा नाम व्यर्थ मिथ्या हैं ॥ ३६ ॥

॥ श्लोकः ॥

प्रतिकूलानुकूलौद्वौभावावध्यासजौमृषा ॥
स्वभाववशगौक्वापिविपरीतौस्वयंकिल ॥ ३७॥

॥ अर्थः ॥

अब अयोग्य अरु योग्य ई दू भेद संसार में है जेकरा मिथ्या कहइ हैं कि प्रतिकूल नाम अयोग्य अनुकूल नाम योग्य ई जे दू भाव है से अध्यास नाम सङ्ग करके उत्पन्न है अरु मृषा है अरु ई दूनो भावके वश है अतो वे स्वयं नाम अपने किल नाम निश्चय क्वापि नाम कहूँ ई विपरीत देख पर हैं अइसन भाव है की एके वस्तु स्वभाव भेद ते केकरी अयोग्य बुझा है केकरो योग्य बुझा हैं अत दूनो भाव मिथ्या है ॥ ३८ ॥

॥ श्लोक ॥

शब्दंश्रुत्वाग्रातौकर्णौबुद्धार्थौवगतामतिः ॥
शब्दस्तुतत्क्षणेनष्टः साक्षीशुद्धस्सदास्थितः॥ ३८॥

॥ अर्थः ॥

अब शुद्ध साक्षी आत्मा के सदा स्थिरता अरु इन्द्रिय बुध्यादि के प्रति क्षण अनित्यता कहइ है कि शब्द के सुन के कर्ण इन्द्रिय जे है से भिन्न हो गेल अरु आभी शब्द के जे अर्थ है ते करा बुझ के बुद्धि भो चल गेल अरु शब्द तो ओही क्षण में नष्ट हो गेल परन्तु साक्षी जे है शुद्ध से सदा स्थित रहइ है ॥ ३८ ॥

॥ श्लोकः ॥

एवंनानाविधः कालेशक्तयः साक्षिणः पुरः ॥
प्रदुर्भवन्तिशाम्यान्तितासांनामम्रृषाजगत् ॥ ३९ ॥

॥ अर्थः ॥

अब साक्षी की नित्यता अरु जगत की अनित्यता कहै हैं कि एवं नाम एही प्रकार ते साक्षीं जो है तेकरा पुनः नाम अगाडी काल पाय के नाना विध शक्ति प्रदुर्भाव हो हे नाना उत्पन्न हो है पुनः शान्त हो हैं ओही शक्ति सब के जगत अइसन मिथ्या नाम है ॥ ३९ ॥

॥ श्लोकः ॥

घृतान्नशर्करंवीजंयथामिष्टान्नजातिषु ॥
नानाविधेषुजीवेषु तथावीजंगुणत्रयम् ॥ ४० ॥

॥ अर्थः ॥

अब नाना विध जीव के होयबे कारण दृष्टन्त सहित कहै हैं कि जइसे अनेक मिष्टान्न जाती में घृत अरु अन्न अरु शकर शब्द सब सब मीठा एहीतीन वीज नाम कारण है तइसहीं नानाविधि जीव मे तीन गुण जो हैसे वीज कारण है ॥ ४० ॥

॥ श्लोकः ॥

घृतान्नशर्क्करंवीजंयथामिष्टान्नजातिषु ॥
नानाविधीन्द्रियोंपषुतथेदभूतपञ्चकम् ॥ ४१ ॥

॥ अर्थः ॥

अबपूर्व दृष्टान्त के विषय की भी कारण कहै हैं कि जइसे मिष्टा-

स जाति मे घृत अन्न मिठा कारण हैं तइसहीं नाना विधेन्द्रियार्थं नाम विषय है तेहमे भूत पञ्च कनाम पञ्च भूत पृथिव्यादि जे है से कारण है अर्थात जइसे कुछ २ भेद ते मिष्टान्न अनेक रंग हो है तइसे पञ्च भूती के किञ्चित २ भेद ते विषय भी अनेक रंग के हो हें ॥ ४१ ॥

॥ श्लोकः ॥

जगत्प्रवाहरूपेणसत्यमस्तीतियद्वचः ॥
निर्दयानांविमूढानांयूनांतदवगम्यते ॥ ४२ ॥

॥ अर्थः ॥

अब संसार के सत्य जे कहइ हैं तेकरा निर्दय मूर्ख वर्णन कर हैं कि जइसे पूर्व जल सदा भिन्न होइत रह है नवीन जल अवइत रह है परन्तु प्रवाह जे है धारा से सदा पूर्ण बुझा है अइसहीं प्रवाह रूप से जगत सत्य है ई जे वचन है से जे निर्दय अरु वि. मूढ़ नाम मूर्ख अरु युवा जे है नाम हृद्व. विवेको नहें तेह लोग के बूझ पर है ॥ ४२ ॥

॥ श्लोकः ॥

यद्यद्वस्तुशरीरेतेतदेवान्यस्यदृश्यते ॥
विशेषणेनकेनत्वंक्षुभ्भन्मुह्यासिभेददृक् ॥ ४३ ॥

॥ अर्थः ॥

अब युक्ति से भेद दृष्टि के पृथक कर हैं कि जेजे वस्तु तोहरा अपना शरीर मे है वोही दोसरा के भी शरीर मे देख पर है तब कौन विशेष करके क्षुभन नाम चञ्चल होइतभेद दृष्टि होके मुह्यसि नाम मोह के प्राप्त होइ स्त्रियादि के विषे ॥ ४३ ॥

॥ श्लोकः ॥

वर्णस्वभावमात्रंब्रुतुद्वैतत्वमिहदृश्यते ॥
गुणात्मकामृषातेपिस्वयंपरिणामन्तिहि ॥ ४४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब युक्ति से अद्वैत निरूपण कर हैं कि एह संसार मे वर्ण जो है श्वेत पीतादिक अरु स्वभाव एही दूनोद्वैत के भावदेखपरदे से वर्ण सब अरु स्वभाव कइसन है कि गुणात्मक नाम गुण से उत्पन गुण रूप है अरु मृषा नाम मिथ्या है काहेकी स्वयं नाम अपने परिणाम कहीं रूपान्तर हो जा है अर्थात कउनो वस्तुश्वेत है कउनो पीत है कउनो के कइसनो स्वभाव है एही २ एहते एही दूनो द्वैत के भाव देखपर है ॥ ४४ ॥

॥ श्लोकः ॥

गतान्यनेकजन्मानिगमिष्यन्ति तथा तव ॥
विकल्पजालमग्नस्य स्वात्मबोधं विनानशम् ॥४५॥

॥ अर्थः ॥

अब आत्मबोध विना सुख न होए से कह हैं कि विकल्पजाल नाम भेद जालमे मग्न नाम डुवल जो तूं ह तेह तोहर अनेकजन्म गत हागैल अरु अनेक जन्म गत होयत परन्तु स्वात्मबोध विना नाम निजरूप के परिचय विना शं नाम सुख न है ॥ ४५ ॥

॥ श्लोकः ॥

आविर्भावतिरोभावौ जानासिवपुषोयादि ॥
विशेषस्तर्हिकःस्वप्नाद्यद्विमूढोनचेतसि ॥ ४६ ॥

॥ अर्थः ॥

अब युक्ति से चेत करै कहहैं कि यदि नामजो वपुषशरीर के आविर्भाव नाम उत्पत्ति तिरोभाव नाम नाश जानह तब स्वप्ना से एकरा कौन विशेष ? कि हे विमूढ़ हे मूर्ख न चेत कर अर्थात स्वप्ना ही है पुनः क्षणान्तर मे नष्ट हो है पहते स्वप्ना के मिथ्वा कहह अदर्सन लक्षण तो शरीर के भो है तब काहेन चेत ॥ ४६ ॥

॥ श्लोकः ॥

दृश्यतेयन्नतत्सत्यं तत्सत्यंयन्नदृश्यते ॥
त्वमेवतत्परं तत्वं परोक्षं मनुषे कथम् ॥ ४७ ॥

॥ अर्थः ॥

अब सत्य असत्य के लक्षण द्वारा निज रूपके परिचय कहहैं कि जे देख पर है से सत्य न हैं अरु जे न देख परै से सत्य है अदृश्य कौन वस्तु है कि 'परतत्व सेह कहहैं कि सेजे पर तत्व है से तो तुहींह तव परोक्ष कहसं मानह अर्थात अपनरूपके परोक्ष कहसे मानह ॥ ४७ ॥

॥ श्लोकः ॥

वासुदेवस्य पूर्णत्वं चिन्मयत्वं च विश्रुतम् ॥
भवस्यसाक्षान्मिथ्यात्वं बुध्वापिनावितृप्यसि ॥ ४८ ॥

॥ अर्थः ॥

अब संसार के मिथ्यात्व कहके दृढ़ कर हैं कि बासुदेव जे हैं आत्मा तेकर सर्वत्र पूर्णता अरुचिन्मयत्व नाम चैतन्य रूपता विश्रुतनाम विख्यात है अरु भवजे है संसार तेकर साक्षात मिथ्यात्व विख्यात है तब अइसनबूझ के भी तृप्ति न होय ॥ ४८ ॥

॥ श्लोकः ॥

न रूपस्पर्शतोभिन्नं शरीरंदृश्यते क्वचित् ॥
नवाद्रष्टुर्वैचित्र्यं कुत्रास्तुत्वमहंवचः ॥ ४९ ॥

॥ अर्थः ॥

अवत्वं अहं ईजेदूवचन है तेकर खण्डन कर हैं कि रूप अरुस्पर्श एहते शरीर क्वचितनाम कहूंईभिन्न न देखपरे अर्थात जेतनाशरीर है से रूप सूपर्श है एहते सब एके है अरु द्रष्टामे भी वैचित्र्यनाम विचित्रता न है तब त्वं अरु अहं ई दूजेवचन है से कुत्रास्तु नाम कहा रहो अर्थात जब दूवस्तु होय तब एक में त्वं अरु एक में अहंरहै से त्वं अहंशरीर जो शरीर में कहो तो शरीर भी सबके एके है द्रष्टा आत्मा में कहो तो उभो एके हैं अतः ई दूवचन अयोग्य है ॥ ४९ ॥

॥ श्लोक ॥

कतिधाशक्तयस्सन्ति तवेच्छावशगामृषा ॥
सावुद्धिर्विवशासाते ऽस्त्येवमीशवशेजगत् ॥ ५० ॥

॥ अर्थः ॥

अब दृष्टान्तद्वारा संसार के ईश्वरवश कहे है कि मृषानाम

झूठा कतिधा नाम कतिना प्रकार के शक्ति तोहरा इच्छावश मे है से इच्छा बुद्धि विवश है से बुद्धि भो तोहरा विवश है एवं नामयश्चो प्रकार तें ईशजी हैं ईश्वर ते करावश में समस्तजगत है ॥ ५० ॥

॥ श्लोकः ॥

कुत्रयासिमनस्तिष्ठन किञ्चिद्वर्त्ततेवहिः ॥
ज्ञाननाम्नारिणागत्य संर्वतेनाशितंजगत् ॥ ५१ ॥

॥ अर्थः ॥

अब युक्ति द्वारा मनके स्थिरकर हैं कि हे मन कहां जाय-तिष्ठनाम स्थिर हो बाहर कुछो न है कदाचित कह कि समस्त जगत हमार बाहर है तहां कह ई कि ज्ञान नामा जो तोहर शत्रु हैं से आकर की सब तोहर जगत के नाश कर देलक अतः स्थिर होय ॥ ५१ ॥

॥ श्लोकः ॥

मिथ्यैवचेदिदंसर्वं मनस्तत्स्मरणेनकिम् ॥
बैकुंठनिलयंहित्वा दुर्गतौकिंनिमज्जसि ॥ ५२ ॥

॥अ र्थः ॥

पुनः मनके उपदेश कर हैं कि हे मनई सब जब मिथ्ये हैं तब एकरा स्मरण कएला से का कुच्छफल न है बैकुंठ निलय नाम बैकुंठ स्थान छोड़को दुर्गतो नाम दुःख स्थाननरक समान मे काहे डूबह ॥ ५२ ॥

॥ श्लोकः ॥

जहीहिधावनं वाह्ये मनस्सर्वाः समृद्धयः ॥
ज्ञानाभिधेनसिद्धेन दर्शिताभवने तव ॥ ५३ ॥

॥ अर्थः ॥

अब लोभ देखाके मन को स्थिर करहैं कि हे मन बाहर के धावन नाम दउरब जहीहि नाम त्यागकर काहेकि जतना समृद्धिनाम सिद्धि सम्पत्ति है से सब ज्ञान नामा सिद्ध तोहरा भवन नामघरे मे देखा देलन अतः बाहर धावन के तोहरा कुच्छ प्रयोजन न है ॥ ५३ ॥

॥ श्लोकः ॥

यदिते छुद्रतानैव याति याहि तदामनः ॥
परन्तुमद्ववचोमत्वामाविज्ञानंहितंविना ॥ ५४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब पुनः युक्ति से मनके उपदेश कर हैं कि हे मन यदि नामजो तोहर छुद्रता न जाय तो 'याही' नाम 'जा' परन्तु हमार बचन मानके 'जा' कउन बचन 'कि' विज्ञानजी हैं से तो हरहित है तेकरा विना मत जा अर्थात् जहां जा तहां ज्ञानसंयुक्तजा ॥ ५४ ॥

॥ श्लोकः ॥

अहोमनोऽतिपातित्यं मृतान्दृष्ट्वापिसंगिनः ॥
करोषिनहृदित्रासंप्रीतिं बध्नास्यथोजनैः ॥ ५५ ॥

॥ अर्थः ॥

अबकिञ्चित भय देखाके उपदेश कर हैं कि अहोमन है

अनई बड़ा पातित्य है नाम पतिते है कि जो तोहर संगी हे से लोग तोहरा देखइते मरइत हैं परन्तु संगी के भरव देखकें भी तूं हृदय मे चास न कर नाम भयन कर अरपुनः जन सभ से प्रीति बाधह ईहे पतिते हे ॥ ५५ ॥

॥ श्लोकः ॥

वदन्तिस्वस्वकार्य्येषुजनाबहुविधाइह ॥
किंसुखंस्वसुखंहित्वा मनस्तच्छ्रवणात्तव ॥ ५६ ॥

॥ अर्थः ॥

अब पुनः उपदेशकर हैं कि इह नाम यह संसार मे बहुविध जन हैं अपन अपन कार्य्य में अनेक विधवचन बोलइत रह हैं परन्तु स्त्र सुखनाम अपन सुख छोड़के तोहरा ए सब बचन श्रवण कयला से कउन सुख हो है अर्थात उसब बचनसे दुखे हैं स्व सुख में मग्न होअ ॥ ५६ ॥

मा याहिकुत्रचिच्चेतः प्रीतिंकुरुचिदात्मनि ।
यद्वाकदान्यसंगेनशोदिष्यसिनबुध्यसे ॥ ५७ ॥

॥ अर्थः ॥

अब मनके अन्य वस्तु में संग परित्याग करके कह हैं कि हे चेतः नाम हे चित्त ! कहो मतजा चिदात्मा नाम चैतन्य जे आ-त्मा है ते करा विषे प्रीति कर काहे की यदा कदा नाम जब अन्य संग ते रोदन भी करह तथापि नबूझ ॥ ५७ ॥

विचारयतविद्वांसोयूयं च पुरुषाइह
यदेच्छारहितानांवोव्यवहारः क्वातिष्ठति ॥ ५८ ॥

॥ अर्थः ॥

अब विद्वान् लोग से अद्वैत निष्ठा करा वहै कि हे विद्वांस: नाम हे विद्वान लोग विचारतो कर इत जा तोहरा गोग काहे की यूयं नाम तुहीं सभनी यह संसार में पुरुषह नाम पुरुषारथ युताइ विचार कइ है कि जब तुइच्छा रहित होइ नाम जेह का- लमे ताहरा लोग के इच्छा कुछ नउठे ओह काल में तोहरा लोग के अनेक व्यवहार जेहै से क्वातिष्ठति नाम कहां रह है अर्थात वह कालमे अद्वैत हय व्यवहार मात्र द्वैत हय से व्यवहार अनि त्य है येतं वं इच्छा रहित मं न बूझ परे ॥ ५८ ॥

॥ श्लोक ॥

अन्धकारेघनेचक्षुर्विद्यमानंयथानसत् ।
तथासुषुप्तिकालेहिज्ञानंकुत्रप्रवर्त्तताम् ॥ ५९ ॥

॥ अर्थ ॥

कदाचित सन्देह होयकि ज्ञानभोती सुषुप्तिकाल में न बुझ परे यह से ज्ञान भी अनित्य है यह सन्देह के दृष्टान्तद्वारा भिन्न कारइय कि जइसे अन्धकार घनसं नाम पूर्ण अन्धकार में चक्षुजेहै नेत्रसे विद्यमान भो है तथापि न सत्नाम नहीं ए तुल्य है अर्थात अन्धकार मे सभ वस्तु छन्न हो गेल नेत्र कौन वस्तुपर जाएतइ हो सुषुप्ति काल मे सभ वस्तु तमोगुण मे झक जाहै तब वह का में

ष्ट जे ज्ञान है से कुच प्रवर्तताम् नाम कहां प्रहत होए यहते अ-विद्या नाम वृक्ष पर है ॥ ५९ ॥

॥ श्लोक ॥

अहोऽविदूरगावार्ताजानंतिसततंनराः ।
तथापिपूर्णमात्मानंदेहगंमन्यतेऽबुधाः ॥ ६० ॥

॥ अर्थ ॥

अब जन सभ सभ बात जान के भी आत्म परिचय न करे इहे आश्चर्य है कि विदूरगा वार्ता नाम बहुत दूरक वार्ता सतत सदा नर जे मनुष्य सभ है से जानता भी है तथापि सर्वत्र पूर्ण जे आत्मा है तेकराके केवल देह मे मानताहै यह ते अबुध नाम अज्ञान सभ है ॥ ६० ॥

॥ श्लोक ॥

शब्दं रूपं रसं गंधं स्पर्शं जानासिचेत्तदा ।
जानीहितवलीलेयं माकांक्षांकुरुदुःखदाम् ॥ ६१ ॥

॥ अर्थ ॥

अब शब्दादि पञ्च विषय मे कांक्षा परित्याग करे कहहै कि शब्दादि जे पाञ्च विषय है तेकरा के चेत् नाम जोतु जानह तो जानीहिनाम जान परन्तु इ शब्दादिक तोहर लीला हय यह सभ मे कांक्षामत कर नाम इ सभ के संगह के इच्छामत कर काहे की यह मे जे कांक्षा है से दुःखदा है नाम पश्चात दुःखदेहै ॥ ६१ ॥

॥ श्लोक ॥

पञ्चानांविषयाणान्तुमिथ्यात्वंस्पष्टमेवहि ।
अतः कुतूहलं वेत्तुरीश्वरस्यावगम्यते ॥ ६२ ॥

॥ अर्थ ॥

अब विषयादिक के परमेश्वर की कौतुक वर्णन करइय कि पांच जे विषय है तेकर मिथ्यात्व नाम असत्यता अछि है नाम प्रत्यक्ष है अतः नाम अतीवे वेत्तानाम ज्ञाता जेहे ईश्वर तेकर कूतूहलनाम खेल बूझ पर है ॥ ६२ ॥

॥ श्लोक ॥

शब्दरूपरसस्पर्शगन्धैर्ज्ञानंविराजते ।
अध्यारोपोभिधानानांददातिविदुषांभ्रमम् ॥ ६३ ॥

॥ अर्थ ॥

अब अनेक नामें द्वारा विद्वान को भ्रम कह है कि शब्दरूप रस स्पर्श गन्ध यह सभ रूप से ज्ञान जेहे से बिराज है परन्तु अभिधान जेहे शब्दादि अनेक नाम तेह नाम सभके जेहे अध्यारोपनाम एक वस्तुमें एक नाम के आरोपन सेई विदुष नाम विद्वान विवेकी के भ्रम देहे अर्थात् अनेक नाम द्वारा द्वैतभ्रम हो है ॥ ६३ ॥

॥ श्लोक ॥

आरोपिताभिधानानां कुर्य्याद्विस्मरणंयदि ॥
क्षणेनविश्वरूपःस्याज्जन्मनाशविवर्जितः ॥ ६४ ॥

॥ अर्थ ॥

अब सभ नामके विस्मरण कएला से शीघ्र निजरूप के प्राप्ति कह है कि आरोपित यतनाये अभिदान कहीं नाम छय तेकर के

यों विस्मरण करदेवे तब क्षणे भरमे जन्म नाश से रहित विश्व रूप हो जाए अर्थात जब नाम विस्मरण होय तब रूप भी विस्मरण हो जायत तब नाम रूप से भिन्न जइसन संसार होय सेहरूप होजाय ॥ ६४ ॥

॥ श्लोक ॥

आरोपिताभिधानानां कुर्याद्विस्मरणंयदि ॥
स्वयन्तर्हिविजानीयाद्द्वैताद्वैतस्यनिर्णयम् ॥६५॥

॥ अर्थ ॥

अब नामके विस्मरण से द्वैत अद्वैत के भी परिचय कहै हैं कि आरोपन कएल जे नाम है तेकरा के जो विस्मरण करे तब स्वयंनाम अपने द्वैत अद्वैत के निर्णय जान जाय अर्थात नामसे द्वैत है एकरा विस्मरण में अद्वैत सिद्ध है ॥ ६५ ॥

॥ श्लोक ॥

शब्दरूपरसस्पर्शगन्धेभ्योऽन्यन्नविद्यते ॥
चिदात्मवेद्यमात्रेभ्यो ऽध्यासोभेदस्यकारणम् ॥ ६६ ॥

॥ अर्थ ॥

अब एक विश्वसार मे भेद क कारण संग के कहै हैं कि शब्दादि जे पांच है तेहसे अन्यत् नाम दोसर कुछ न है अर्थात समस्त संसार एही पांच है इ पाचों कैसन है कि चेतन्य आत्माके वेद्यमात्रहय नाम आत्मा ज्ञाता है विषय ज्ञेय है नाम आत्मा से जानलजा है परन्तु असंख्य भेद जे बूझपर है तेकर कारण अध्यास है नाम सङ्ग जे है सेह कारण है ॥ ६६ ॥

॥ श्लोकः ॥

नविभेदस्तुबोधेस्तिसर्वजन्तुषुकेवले ।
मृषाबोध्यविभेदेन द्वैतवादस्य कल्पना ॥ ६७ ॥

॥ अर्थः ॥

अब बोध अरू बोध्य की भेद ते द्वैताद्वैत देखा व हैं कि सभ जन्तु मेये बोध है केवल तेंइ मे कुछ विभेद न है अर्थात बोध जे है से सभ जन्तु मे एकै है परन्तु मिथ्या ये बोध्य नाम विषय है तेकरा भेद से द्वैत वाद की कल्पना नाम रचना है ॥ ६७ ॥

॥ श्लोकः ॥

स्थूलं कृशं बृहत् स्वल्पं यद्यल्लोके प्रदृश्यते ।
न रूपस्पर्शतो भिन्नंनाम मिथ्या विमोहदम् ॥६८॥

॥ अर्थः ॥

अब नाम मेहै अनेक तेकरे भ्रम की देनिहार वर्णन कर है कि स्थुलनाम मोटा कृशनाम पातर बृहतनाम बड़ा स्वल्पनाम छोटा अइसन जे जे वस्तु लोक मे देख पर है से सभ रूप अरू स्पर्श यह ते भिन्न न है अर्थात सभ रूप स्पर्श है परन्तु अनेक मिथ्या नाम जे है सेहू विमोहद है नाम भ्रम की दे निहार है ॥ ६८ ॥

॥ श्लोकः ॥

न भोगो विषया नान्ते देहेन भवति क्वचित् ।
यतस्सोपिजडो वेद्यो वेत्तात्वंसर्वभः प्रभुः ॥६९॥

॥ अर्थः ॥

अब विषय के भोग देह द्वारा आत्मा मे बूझा है तेकरा खण्डन कर हैं कि देह द्वारा विषय सबके भोग क्वचित नाम कबहो तोहरा नहोय का है कोयतेँ कि जे देहहै से मौजुद है अरू वेद्य हेतु देह के भी बेताह नाम जान निहारह अरु सर्वगह नाम सर्वत्र पूर्णह अरु प्रभुनाम समर्थह ॥६९॥

॥ श्लोकः ॥

दुःखे सुखं सुखेदुःखं सावधानो विदांकुरू ।
योगासिध्याल्पकालेन स्वतन्त्रत्वंयदीच्छसि ॥७०॥

॥ अर्थः ॥

अब शीघ्रस्वतन्त्र होय के उपचार कह हैं कि अल्पकाल कर के योग सिद्धि से स्वतन्तरत्व के नाम स्वतन्त्र होय के जो इच्छा कर इतहोअ तो सदा सावधान हो के दुःख मे सुख अरु सुख मे दुःख के विचारकर दुःख मे सुख भावयह प्रकारते करे कि दुःख तो पाप के फल है तेकर भोग जो हो है तो अपूर्व है यतेँ पाप छुटैत है अरु सुख मे दुःख बोध यह प्रकार तेकरे कि सुख तो पुण्यघटैत है तब पुनः तो पाप भोग होवत ईहते पुण्यके नाशमे दुख माने ॥ ७० ॥

॥ श्लोकः ॥

याऽहन्ताममतादेहे सायथास्याच्चिदात्मनि ।
तथाप्रयत्नतःकुर्याद्बूथासर्वज्ञतान्यथा ॥७१॥

॥ अर्थः ॥

अब अपना शरीर मे जो अहंभाव है अरू अपन संबंधी ये स्त्री पुत्रादिक हैं तेकरा शरीर मे ज मम भाव है नाम हमर है स्त्री है पुत्रादिक है इजे दुनो भाव देह मे हैं तेकरा को पृथक करे कह हैं कि जो अहंता नाम अहंभाव अरू ममता नाम मम भाव देह विषे यह से भाव जेह प्रकार ते चिदात्मा जो है चैतन्य आत्मा तेकरा विषेहोय तइसन प्रयत्न से करें अर्थात देह के विषेजे आत्मा है तेकरा विषे अहंमम शब्द के भाव करे अरू देहतो अनित्य है यहते देहमे इ दुनो भाव करि अन्यथा नाम अइसन भाव जो न करे तौ सर्वज्ञता नाम हम सर्वज्ञहो सभवार्त्ताहम जानहीं अइसन जो सर्वज्ञता मान है से वृथा नाम व्यर्थ है ॥ ७१ ॥

॥ श्लोकः ॥

शत्रुभिर्हृतराज्यस्य ममतादेहमात्रके ।
यथातथैवजीवस्य माययाविवशस्यवै ॥ ७२ ॥

॥ अर्थः ॥

अबमाया द्वारा देहे भरमे ममता जीव के दृष्टान्त सहित कह है कि जइसे शत्रु से राज्य हरण हो गेल है जो राजा के तेह राजा के ममता देहे मात्र नाम देहे भरमें रहजा है तइसहो माया से विवश जो जोव है तेकर भी ममता देहे भर मे हो है ॥७२॥

॥ श्लोकः ॥

प्राप्तराज्यस्यानिःस्वस्यममतावर्द्धतेयथा ।
तथाविज्ञानिनोऽज्ञस्यस्वयंसर्वत्रपूर्णता ॥७३॥

॥ अर्थः ॥

अप जीव की सर्वत्र पुर्णता दृष्टान्त द्वारा कहे है कि जइसे नि:स्वजे है दरिद्र तेकरा जो राज्य प्राप्त हो जा है तब ओकर जइसे ममता बढ़हय तइसहो अज्ञनाम अज्ञान जेहे तेकरा जब विज्ञान प्राप्त हो है तब विज्ञानो जे अज्ञ हैं तेकरा स्वयं नाम अपनो सर्वत्र पूर्णता नाम हमतो सर्वत्र पूर्णहि अइसन भाव हो जा है ॥ ७३ ॥

॥ श्लोकः ॥

साक्षात् कृत्वा स्वरूपंयो बुद्धयादिममतांत्यजेत् ।
परात्मनेसराजास्यात्तस्यामात्यइवेश्वरः ॥ ७४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब शरीरादि मे ममता परित्याग कैसा पर जीव को राजो रूपवर्णन करहैं कि स्वरूपनाम अपनजे रूप हैं तेकरा साक्षात नाम प्रत्यक्ष करके अरु बुद्धयादिक मे जे ममता है सेत्याग कर देवे तब परात्मा जे है ईश्वर तेकरा अर्थ इजीव राजा हो जाय अर्थात राजा सदृश्य निश्चिन्त हो जाय अरु ईश्वर तेह जीव के आमात्य नाम मंत्री के सदृश हो जाय ॥ ७४ ॥

॥ श्लोकः ॥

परमात्मकृतेकार्य्ये सर्वस्मिन्ममतां व्यधात् ।
हेतुनानेन वद्धोसौमुच्यते तत्समर्पणात् ॥ ७५ ॥

॥ अर्थः ॥

अब जीव के वंधन अरु मुक्त के कारण कहहय कि परमात्मा

के करल येकार्यहय समस्त संसार तेहमे अपनाँ ममता विधान जोवक एल तेहो हेतु येहूये जीवहय से वध यह. पुन: सभकार्यं नाभसभ कर्म परमेश्वर मे समर्पण करला से मुच्यते नाम मुक्त हो थाय संसार बंधन से छुटजाय ॥ ७५ ॥

॥ श्लोकः ॥

अहंकारादिकं सर्वंसमर्प्य परमात्मने ।
स्वयंभवतिनिश्चिन्तस्स आत्मापरमात्मनः ॥७६॥

॥ अर्थः ॥

अत्र अहंकारादि के परमेश्वर मे समर्पणाते जीव के निश्चिन्तता कह हयकि अहंकारादिकयतमा जेसभ वस्तु हयसे . परमात्मा जे इश्वर हय तेकरा अर्थे समर्पण कर के तवसे आत्माजे हय जीव से परमात्मा से भी स्वयंनाम अपने निश्चिन्त हो जा हय ॥ ७६ ॥

॥ श्लोकः ॥

अविद्याप्रभवास्सर्वे येऽहंकारादयःपुरा ।
भक्त्यापरात्मनस्सत्सुविद्यारूपाभवन्तिते ॥७७॥

॥ अर्थः ॥

अत्र परमेश्वर के भक्ति से विद्या के उत्पत्ति कह हय कि पुरानाम पूर्वे ये अहंकारादिक हय से अविद्या ये अज्ञान हय तेह से भवनाम उत्पन्न हय सोहो अहंकारादिक परात्मानाम परमेश्वर के भक्ति करके सतजे सज्जन हय तेकरा विषेविद्यारूप होया हय अर्थात विषय से निवृत्त होकर के अहंकारादिक सभ परमेश्वर सन्मुख प्रवृत्तहो हय ॥ ७७ ॥

॥ श्लोकः ॥

बालोऽज्ञानवशादेकमर्थं जानाति न स्वयम् ।
सएवपठनात्पश्चाद्विद्यावान् ग्रन्थकारकः ॥ ७८ ॥

॥ अर्थः ॥

अब पठन के सेवन से अज्ञाननाश अरु ज्ञान की उत्पत्ति कहत हय कि बालजे हय बालक से अज्ञान वसते पहिले एको अर्थ स्वयं नाम अपने ग्रन्थ को न जाने से हुबालक पठनासे पीछे विद्यावान हो जा हय अरु ग्रन्थ कारक नाम ग्रन्थ केकरनिहार होया हय इ स्लोक पूर्व स्लोक के दृष्टान्त वत बुझ पर हय काहे कि अइसही भक्तिकर के अहंकारादि विद्या रूप हो हय ॥ ७८ ॥

॥ श्लोकः ॥

मृषात्वंदृश्यमात्रस्यब्रह्मत्वंस्वस्यसर्वदा ।
विभावयतियस्तस्यभवत्येवस्वतन्त्रता ॥ ७९ ॥

॥ अर्थः ॥

अब भावना द्वारा स्वतन्त्रता वर्णन कर हय की दृश्यमात्र को नाम संसार भर के मृषात्वनाम मिथ्यात्व भावना करे की संसार सभ मिथ्या हय अरु स्वस्यनाम अपना के सर्वदा नाम सदा ब्रह्मत्वनाम ब्रह्म भावना करे अइसन विभावना सदा येकर हय ते करा स्वतन्त्रता भवत्येव नाम होय वे कर हय अर्थात ब्रह्म भावना ते ब्रह्म हो जा हय तब केकर परवस होय ॥ ७९ ॥

॥ श्लोकः ॥

स्वात्मासाक्षात्कृतोयैर्न देहेऽहंममताकुलैः ॥
चर्ममांसमयेतेषां वैदुष्यंशुकभण्डवत् ॥ ८० ॥

॥ अर्थः ॥

अब जे लोग आत्मा के साक्षात कारन कैल तेह लोग के निन्दा कर हय कि चर्म मांस मय ये देह है तेह मे अहं भाव से सदा व्याकुलजे हय से एह देह मे जो आत्मा नाम अपनरूप के साक्षात्कार नकैल तेह लोगकेवे दुष्य नाम विद्वानता पंडिताइ कहइसन हय कि शुकभंडवत नाम जइसे सुगा अरु भाड बहुत श्लोकादिक जान है परन्तु अपना में ओह श्लोकादिक के रस नबूझ परे तइसहीं ओह लोग के पंडिते कहे भर है ॥ ८ ॥

॥ श्लोकः ॥

द्रष्टाश्रोतापरःस्वीयो निन्दकोऽथप्रशंसकः ।
सर्व्वेमिथ्याविनश्यन्तिव्यर्थेहालौकिकीसताम् ॥८१॥

॥ अर्थः ॥

अब सज्जन लोग जेलौकि कलोक संबंधी चेष्टा व्यापार कर हय तेकरा के व्यर्थ कह हय कि द्रष्टा नाम देषनिहार अरु श्रोता सुन निहार पर नाम पराया शत्रु अरुस्वीय नाम अपन जन अरु निन्दक अरु प्रसंसक नाम प्रसंसा के करनिहार इसभ मि-थ्या हय विनश्यन्ति नाम सभ एक काल मे नाश के प्राप्त होजा हय अतः सतजे विवेकि हय तेह लोग के लौकि को जे इहां चेष्टा हय से व्यर्थ हय एह अइसन भावहए कि लौकिक व्यवहार जे

लोग कर हय से देखावे का अर्थे सुनावे का अर्थे शत्रु के अर्थे आलो के अर्थे निन्दक के अर्थे येहमे के उ निन्दान करे प्रशंसक के अर्थे से देख निहार सुन निहार आदिले के सभजव मिथ्ये हय तव एह सभके अर्थे लौकिक व्यवहार कर पारलौकिक छौडके व्यर्थे हय ॥ ८१ ॥

॥ श्लोकः ॥

अहोसुदुर्गमोदेशो यस्त्वद्वैताभिधोविदाम् ।
हसतो रूदतो जीवा नेकं पश्यान्तियद्गताः ॥८२॥

॥ अर्थः ॥

अव विवेकि लोग के जे अद्वैत पद्म हय तेकरा के दुर्गम वर्णन कर हय कि यिदांनाम विद्वान विवेकी लोग के अद्वैताभिध-नाम अद्वैत नाम करके जेदेश हय से अहोनाम आश्चर्य हय अरु सुदुर्गमहय नाम शीघ्र प्राप्त होय के योगन हय कठोर हय काहे की येह देशमे प्राप्त हो के रह के एक जोव हंस दूत है एक रोहत है दुनो के एक से देख हय ॥ ८२ ॥

॥ श्लोकः ॥

अहोसुसुखदेदेशे रमन्तेऽद्वैतवादिनः ।
अनित्यत्वादिदंमिथ्यामत्वासुखहृदोऽचलाः ॥ ८३ ॥

॥ अर्थः ॥

अव अद्वैत्त वादी के देशके बड़ाई कर हैं कि अहो आश्चर्य सुन्दर सुखद देश में अद्वैत वादी लोग रमण कर हैं ई संसार अनित्य है एह ते मिथ्या मान के अचल हो जा हैं सुख हृदनाम

सुख हृदय में प्राप्त करते हैं अर्थात् दुःख के वस्तु को मिथ्या बूझ के सदा सुख रूप में मग्न रहते हैं ॥ ८३ ॥

॥ श्लोकः ॥

अस्तुसत्यमसत्यं वा द्वैतंवाऽद्वैतमित्यलम् ॥
स्वशरीराऽस्थितिं बुध्वाचिति विश्रमणंवरम् ॥८४॥

॥ अर्थः ॥

अब शरीर के अनित्य बूझके चैतन्य आत्माके विश्राम करे कहते हैं कि संसार सत्य होय अथवा असत्य होय द्वैत हो अथवा सिद्धान्त अद्वैत होय इत्यलम् नाम व्यर्थ है अर्थात् कुछ होय एह से कुछ प्रयोजन न है परन्तु अपन शरीर के स्थिति नाम नाश बूझ के अर्थात शरीर तो एक दिन नष्ट हो यत अइसन बूझ के चित नाम चैतन्य विषे विश्राम करना वर होय नाम अच्छा श्रेष्ठ है ॥ ८४ ॥

॥ श्लोकः ॥

कदापिन हृदाकार्य्या विषयेषुगुणस्मृतिः ।
योग हन्त्रीयतोमूलं प्रमादाभिनिवेशयोः ॥८५॥

॥ अर्थः ॥

अब विषय मे गुण स्मरण कएला से अनेक दुःख कहते हैं कि कवहीं भी हृदय करके विषय मे गुण स्मृति 'न' कार्य है नाम न करे योग्य है अर्थात विषय मे गुण विचार न करे काहे को विषय मे गुणस्मृति जे है से 'योग हन्त्री' है नाम योग जे

समाधि है तेकर नाशकरनिहार है अरु यतेवे प्रमाद जे है निज रूपके भूल जाना अरु अभिनिवेश जे है विषय में चित्तके प्रवेश होना यह दूनो के मूल नाम 'जर' कारण है ॥ ८५ ॥

॥ श्लोक ॥

मिथ्याज्ञात्वापि संसारं पुनस्तच्चर्चयासुखी ॥
हृदाभवतियस्तस्यपरमात्मासुदुर्ल्लभः ॥ ८६ ॥

॥ अर्थ ॥

अब जेकरा संसार के विषे सुख बूझ पर है तेकरा अर्थे परमात्मा के दुर्लभरूप है कि संसार के मिथ्या जान के भी अब पुनः संसार की चर्चा सुनके हृदय से जे सुखी हो है नाम जेकरा सुख बूझ पर है तेकरा परमात्मा सुदुर्लभ हैं अर्थात् परमात्मा ओकरा न प्राप्त हो सके ॥ ८६ ॥

॥ श्लोकः ॥

अवश्यंसंयमःकार्योवाक्कायमनसामृतम् ॥
सुखमाकांक्षतातावत् नसदारोगिणांयथा ॥८७॥

॥ अर्थः ॥

अब मन वचन शरीर के संयम करे कहहैं कि जेकरा ऋत नाम सत्य सुखके आंकांछा नाम इच्छा होय तेकरा अवश्य 'वाक' नाम वचन अरु काय शरीर अरुमन एह सबके संयम कार्य नाम करे योग्य है संयमभी तावत् नाम तबहीं तक जब तक सुख न प्राप्त होय अरु सदा न करे योग्य है दृष्टान्त कह हैं कि जइसे

रोगी सबके संयम जब तक सुखन होय तवहीं तक भो है तइसहीं ॥ ८७ ॥

॥ श्लोकः ॥

इति किं तेनकिंक्वापि क्वाप्यहोकौतुकंविभोः ॥
सर्वमायेति वा वाग्भिः शान्तिमेतिमनोजवः ॥८८॥

॥ अर्थः ॥

अब मन के संयम के युक्ति वचन कहे हैं कि जब मन कहे जाय तब कहैं अइसन वचन कहैं कि इति किं नाम' ई का है अर्थात कुछ न है अरु क्वापि नाम कहैं तेन किं 'नाम' जो तू उहां गेल तेहसे का अर्थात तेहसे भी कुछ फल न है अरु क्वापि नाम कहैं अहो कौतुकं विभोः नाम ई सब विभु परमेश्वर के आश्चर्य लीला है अरु कवहीं अइसन कहे की ई सब माया है इहे सब वचन से मन के जे 'जव' नाम वेग है से शान्ती के प्राप्ती हो है ॥ ८८ ॥

॥ श्लोकः ॥

यदोत्थायभवन्त्येताश्चलितुंचित्तवृत्तयः ॥
तदैवचेदसङ्गस्सन्द्रष्टाऽसंयोगमाप्स्यसि ॥ ८९ ॥

॥ अर्थः ॥

अब शीघ्र समाधि लाभ के युक्ति कहे हैं कि जब चित्त की वृत्ति उत्थाय नाम उठ के चलितुं नाम चले पर होय तदैव नाम तवहीं ए जो असंग हो के द्रष्टा होय नाम यहा चित्त वृत्ति जाय तहां अपने प्रवृत्त न होय किन्तु पृथक होके देखइत रहे कि

करते करते जा है तब अरं नाम शीघ्र योग नाम स्थिरता समाधि को प्राप्ति करे ॥ ८९ ॥

॥ श्लोकः ॥

सुषुप्तिसमयेसौख्यं न जाग्रत्तुल्यमित्यलम् ॥
विकलोविषयैर्निद्रां करोति सुखलब्धये ॥ ९० ॥

॥ अर्थः ॥

अब तीनों अवस्था में सुषुप्ति अवस्था में अधिक सुख वर्णन कर हैं कि सुषुप्ति समय में सौख्य नाम सुख जाग्रत अवस्था के तुल्य न है इति नाम अइसन जे कहब हैं से अलं नाम व्यर्थ है काहे को जाग्रत अवस्था में जब विषय से विकल हो है तब सुख लाभ के हेतु लोग निद्रा कर हैं नाम 'सूत है ॥ ९० ॥

॥ श्लोकः ॥

सुषुप्तिजं सुखंलब्ध्वा व्यवहारे प्रवर्त्तते ॥
जीवोनक्तंदिवातस्मात्करोतिशयनंपुनः ॥ ९१ ॥

॥ अर्थः ॥

अब सुषुप्ति के बल से व्यवहार करे में समर्थता कह हैं कि सुषुप्ति काल केजे सुख है ते करि लाभ करके जीव जे हैं से नक्तं दिवा नाम दिन रात व्यवहार में प्रवृत्त हो हैं तस्मात् नाम तेही ते पुनः शयन लोग कर हैं नाम पुनः ओही सुख के अर्थे सूत है ॥ ९१ ॥

॥ श्लोकः ॥

तमसाच्छादितायान्तु बुद्ध्यामीदृक्सुखोद्भवः ॥
किंपुनर्निर्गुणज्ञान मग्नायां सुखवर्णनम् ॥९२॥

॥ अर्थः ॥

अब निर्गुण अवस्था में एह ते अधिक सुख वर्णन करे हैं कि जब सुषुप्ति काल में तमोगुण से बुद्धि के आच्छादित नाम झंकेला पर ई दृक् नाम अद्दसन सुख के उद्भव नाम उत्पत्ति हो है तब निर्गुण ज्ञान में जब मग्न नाम डूब जाय बुद्धि तेह सुख के कौन वर्णन है अर्थात् ओह सुख के वर्णन न हो सके ९२

॥ श्लोकः ॥

सुप्तप्रबोधयोः सन्धौयावस्थासाद्यनिर्गुणा ॥
नाहंकारोनबुद्धिश्चतत्रज्ञानस्वयंप्रभम् ॥ ९३ ॥

॥ अर्थः ॥

अब निर्गुण अवस्था के परिचय कहे हैं कि सुप्त जे है निद्रा अरु प्रबोध नाम जागरण एह दुनो के सन्धि में जे अवस्था है नाम जागरण के अन्त निद्रा के आदि एक रे सन्धि नाम मध्ये बीच में जे अवस्था है से तो निर्गुण अवस्था कहावे है काहे कि ओह काल में न अहंकार है अरु न बुद्धि है किन्तु तत्र नाम तेह काल में स्वयं प्रभनामस्व प्रकाश ज्ञान जे हैं सेइ है ॥ ९३ ॥

॥ श्लोकः ॥

यदायदान्यदापिस्याच्चित्तंज्ञानमयांस्थिरम् ॥
ससमाधिस्तुरीयाख्यो ह्यवस्थात्रितयात्परः ॥ ९४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब दोसरा समय में भी निर्गुण अवस्था के परिचय कहे हैं कि जब २ अन्य दा नाम दोसरो समय में चित्त स्थिर होय संसार

में कहीं न लगन होय ज्ञान मय भेल होय सेइ समाधि कहावे है
तीनो अवस्था से परे तुरीय नाम चउठा अवस्था कहावे है ॥९४॥

॥ श्लोकः ॥

शास्त्रकर्मादरस्तावद्यावत्तत्त्वं न भासते ॥
धारणादरणं पश्चाद्यावद्देहादिविस्मृतिः ॥ ९५ ॥

॥ अर्थः ॥

अब निर्गुण अवस्था के प्राप्तभेला पर साधन के परित्याग करे कहे हैं कि शास्त्र में जे कर्म कहल है तेकर आदर नाम करना तावत नाम तबही तक है जब तक तत्त्व न भासे नाम पर तत्त्व जब तक साक्षात् कार न होय तेकरा पश्चात् धारणा नाम सदा संसार से 'तीर कैं' नाम हटा कै या खींच कै तत्त्व में चित्त के रखना तेकर आदर करै नाम सदा एही अभ्यास करै एकर भी आदर तबहीं तक जब तक देहादि के विस्मृति नाम विस्मरण न होय अर्थात् देहादि विस्मरण भेला पर तो सदा अपने आनन्द रूप हो जा है ॥ ९५ ॥

॥ श्लोकः ॥

यत्रयत्र करोमीतिभावोऽज्ञानिनिविद्यते ॥
तत्रतत्र विजानामीत्यन्तर्ज्ञानिनितिष्ठति ॥ ९६ ॥

॥ अर्थः ॥

अब ज्ञानी अज्ञानी के भेद देखावे हैं कि यत्र २ नाम जे २ वस्तु में अज्ञानी के हृदय में करोमि अइसन भाव है तत्र २ नाम तेह २ वस्तु में ज्ञानी लोग के अन्तः करण में विजानामि अइसन

भाव रहे है अर्थात् अज्ञानी लोग कहे हैं कि हम इकर इत हौ एकर कर्त्ता हमही भरु ज्ञानी कहे हैं कि हम एकरा जान हौ एकर ज्ञाता साची रूप हमही ॥ ८६ ॥

॥ श्लोकः ॥

साधनानिसहस्त्राणिहित्वेदंकुरुसाधनम् ॥
यथानहृदयाद्यायाद्विजानामिपदंक्षणम् ॥ ९६ ॥

॥ अर्थः ॥

अब सदा ज्ञानी के जे भाव है ते करे साधन करे कहे है कि हजार हो साधन हित्वा नाम छोड़ के इदं नाम इ साधन कर कि यथा नाम जेह में हृदय से बिजानामि पदनाम हम ज्ञाता हौ जाननिहार हौ इ भाव चण भर भौ न जाय सदा एही साधन करके चाही ॥ ९७ ॥

॥ श्लोकः ॥

यस्मिन् यस्मिन् क्षणेयद्यद्भाविदुःखंसुखञ्चवा ॥
तदवश्यंभवत्येववृथाविस्मरणंहरेः ॥ ९८ ॥

॥ श्लोकः ॥

अब सुख दु:खादि चिन्ता छोड़ के परमेश्वर के स्मरण करे कहे हैं कि जौन २ चण में जे २ सुख अथवा दु:ख भावी होय से तो अवश्य होय वे करे है तब जे अपने होय ते करे चिन्ता में भरुहरि परमेश्वर के बिस्मरता कर देना वृथा नाम व्यर्थ है ॥ ९८ ॥

॥ श्लोक ॥

व्यवहारदशालीलापरमार्थदशाभवा ॥
इतिजाननहृदालोकेनिर्मोहोविहरेत्सुखी ॥ ९९ ॥

॥ अर्थः ॥

अब संसार से निर्मोह हो के सुख पूर्वक विहार करे कहे है कि व्यवहार दशा के जे लीला है से परमार्थ दशा से उत्पन्न है अइसन जाने त हृदय से लोक में निर्मोह हो के विहार करे सुखी हो जाय अर्थात् परमार्थ दशा के व्यवहार दशा कार्य्य है कार्य्य तो मिथ्या हो है अतः संसार जे है व्यवहार दशा ते करा मिथ्या बूझ के सुखी हो जाय ॥ ९९ ॥

॥ श्लोकः ॥

परमार्थदशात्माचित्व्यवहारदशाजगत् ॥
परमार्थदशासत्याव्यवहारदशामृषा ॥ १०० ॥

॥ अर्थः ॥

अब दूनो दशा के परिचय अरु सत्यता असत्यता कहे हैं कि चित् चेतन आत्मा जे है से हू परमार्थ दशा कहावे है अरु जगत जे संसार है से हू व्यवहार दशा कहावे है तेह में परमार्थ दशा सत्य अरु व्यवहार दशा मृषा नाम मिथ्यो है ॥ १०० ॥

॥ श्लोक ॥

ज्ञात्वासत्यंनिराकांछोगीतावाक्यात्सुखीभवेत् ॥
विगतेच्छाभयक्रोधोयस्सदामुक्तएवसः ॥ १०१ ॥

॥ अर्थ ॥

अब सत्य के जान के सभ के कांछा परित्याग करके सुखी होय कहे है कि सत्य के ज्ञात्वा नाम जान के निरा कांछ हो के गीता वाक्य से सुखी हो जाय गीता वाक्य कहे हैं कि विगते-

इच्छाभय क्रोध नाम जो इच्छा भय क्रोध एह तीनो से विगत नाम तीनों के जो छोड़ दे से सदा मुक्त रूप है ॥ १०१ ॥

॥ श्लोकः ॥

सत्संगेनजगन्मिथ्याज्ञात्वासत्यंतदीश्वरम् ॥
तत्कृपालब्धतत्त्वोयस्सस्वतन्त्रोऽन्यमुक्तिदः १०२

॥ अर्थः ॥

अब परमेश्वर के क्रपा से जेकरा तत्व लाभ होगेल तेकर वर्णन करे हैं कि सत्संग से जगत् के मिथ्या जान के अरु ईश्वर के सत्य जान के अरु तेही परमेश्वर का क्रपा से जे तत्व लाभ कर ले है से स्वतन्त्र हो जा है अरु दोसरा के मुक्ति के दे निहार हो जा है अर्थात परमेश्वर जइसे स्वतन्त्र हैं नाम अपना वश में हैं तइस हो होजा है ॥१०२ ॥

॥ श्लोकः ॥

यथानुरक्ताव्यवहारमार्गेकदापिनात्मानमनुस्मरान्ति॥
तथायएनंमनसोपहायसदात्मरक्ताविभवोभवन्ति ॥

॥ अर्थः ॥

अब समर्थ होय के युक्ति दृष्टान्त सहित कहे हैं कि जइसे व्यवहार मार्ग में सदा अनुरक्त रहे हैं नाम लगल रहे है लोग अरु कब हीं भी आत्मा के स्मरण न करें तथा नाम तइसे इ जो व्यवहार मार्ग है तेकरा के जेमन से पहाय नाम छोड़ के सदो आत्मा में लगे हैं प्रीति करे हैं से विभु नाम समर्थ होजा है ॥१०३॥

॥ श्लोकः ॥

दिनंप्रयातिसर्वेषांयथादिष्टंप्रयास्यति ॥
वृथामोहवशाद्रामंविसृज्यविकलानराः ॥१०४॥

॥ अर्थः ॥

अब परमेश्वर के छोड़ के विकल लोग रहे है अपना व्यवहार मे तेकरा पछताव है कि यथा दिष्ट नाम जेकर जइसन प्रारब्ध है तेकर तइसन दिन प्रयाति नाम चल के जाइत है अरु प्रयास्यति नाम चल के जायत तेकरा अर्थे वृथा नाम व्यर्थ मोह बस से रामजी के छोड़ के नर मनुष्य सभ विकल हो रहल है ॥१०४॥

॥ श्लोकः ॥

रामकृष्णनृसिंहादिलीलारूपैर्यईश्वरः ॥
ददातिभजतांदिव्यंज्ञानंतस्मैनमोनमः ॥ १०५ ॥

॥ अर्थः ॥

अब एह मतका के अन्त मे ज्ञान दे निहार जे परमेश्वर हय तेकरा नमस्कार करै हैं कि राम कृष्ण नृसिंहादि जे लीला रूप है तेह रूप से जे ईश्वर भजन के कर निहार लोग के दिव्य ज्ञान दे है सोन जे ईश्वर हैं तेकरा नमस्कार कर हो नमस्कार करही ॥१०५॥

॥ श्लोकः ॥

नाभिमानोममास्त्यत्रवक्तान्यः परमेश्वरः ॥
सिद्धान्तशतकन्त्वेतत्सहस्रश्लोककार्य्यकृत् ॥१०६॥

॥ अर्थः ॥

अब यह शतकको बड़ाई करै हैं कि एह मैं हमर अभिमान न है नाम हम एह ग्रन्थ की कइलो अइसन अभिमान न है काहे कि वक्ता अन्य नाम दोसर परमेश्वर है अब एतत नाम इ जो सिद्धान्त शतक है से सहस्र नाम हजार श्लोक की कार्य्य के कर निहार है ॥ १०६ ॥

॥ श्लोकः ॥

चैतन्यार्कप्रकाशान्तर्मृगतृष्णायितम्भवः ॥
किंसत्यलक्षणंतद्यन्नदृश्येतक्षणान्तरे ॥ १०७ ॥

॥ अर्थः ॥

अब यहो ग्रन्थ के अन्त मे इहां से चार श्लोक के चतुश्लोको नाम इय तेह में पहिले संसार की मृगतृष्णा सदृश कह के अर लक्षण द्वारा असत्य कहे हैं कि चैन्य जो अर्क सूर्य है तेकरे प्रकाश के अन्तर नाम मध्य में मृग तिष्णायितनाम मृग तृष्णा के सदृश भव संसार है अतः सत्य भी न है काहे की इ कौन सत्य के लक्षण है कि जे क्षणान्तर में न देख परे नाम कवहीं है कवहो न देख परे अर्थात इ तो असत्य के लक्षण है ॥ १०७ ॥

॥ श्लोकः ॥

मनसस्त्विन्द्रियाणाञ्चजयेयत्नश्रमोमुधा ॥
यदिनाममृषादृश्यंकेवलंब्रह्मराजते ॥ १०८ ॥

॥ अर्थः ॥

अब इन्द्रिय अरु मन इ सभ के जीते के अर्थे जेप्रति अमलोग

करे हैं तीसरा व्यर्थ कहे हैं कि मन के पद इन्द्रिय सभ के जय नाम जीते में यत्न परिश्रम जे है से मुधा नाम व्यर्थ है का है कि यदि नाम यों दृश्य जे है संसार से मृषा नाम मिथ्या है के वल ब्रह्म सर्वत्र विराजि हैं तेह से अर्थात् संसार कुछ ।पदार्थ है. तब मन इन्द्रिय सभ कहा जीतन एह ते सदा संसारभाव पृथक कर के सर्वत्र ब्रह्म दृष्टि करना एही साधन करे स्वतः इन्द्रिया दिक के पराजय होजाय ॥ १०८ ॥

॥ श्लोकः ॥

क्षणमात्रं न दृश्यस्य सत्यत्वं हृदि चिन्तयेत् ॥
स्यात्कांक्षा यदि दुःखस्य विनाशे सुखलब्धये ॥ १०९ ॥

॥ अर्थः ॥

अब सदा संसार के असत्य बूझे कहे हैं कि क्षणभर भी दृश्य के सत्य ल नाम सत्य।भावना हृदय में चिन्तवन न करे जो दुःख के विनाश के कांक्षा होए अरु सुख के लाभ के कांक्षा होय तब ॥१०९॥

॥ श्लोकः ॥

प्रमादाभिनिवेशाभ्यां मायाछलयातिद्रुतम् ॥
इति विज्ञाय धैर्य्येण नच्यवेतात्मतत्त्वतः ॥ ११० ॥

॥ अर्थः ॥

अब माय ठगिनी से चैतन्य रहे कहे हैं कि प्रमाद नाम निज रूप विस्मरण अरु अभिनिवेश नाम विषय में चित्त के प्रवे- श होना एही दु उपाय से माया द्रुत नाम शीघ्र छलयति नाम

छल करै है। ठग है अद्भुत ज्ञान के धीरता कर के पाल तत्व से नाम निज रूप के स्मरण से न च्यवेत नाम न अलग होय ॥ ११० ॥

॥ श्लोकः ॥

चतुश्लोकीमिमां जानन्ननायासेन मुच्यते ॥
यदि मिथ्येन्द्रियार्थेषु भवेद्रतिविवर्जितः ॥ १११ ॥

॥ अर्थः ॥

अब चतुःश्लोकी के फल वर्णन करै हैं कि इ चतुश्लोकी के जे जानैत रहै से अनायास से नाम विना परिश्रमे मुच्यते नाम मुक्त हो जाय संसार से परन्तु मिथ्या जे इन्द्रियार्थ नाम विषय है तेह में जो रति विवर्जित होय नाम प्रीति न करै तब ॥ १११ ॥

॥ श्लोकः ॥

उपमा दर्शिता नानासुहृद्भिर्वृत्तिवृत्तये ॥
विवादस्तत्र मूढानां कोपमा निर्गुणोपमे ॥ ११२ ॥

॥ अर्थः ॥

अब ब्रह्म पक्ष में जहां तहां के दृष्टान्त है तेह में मूढ़ लोग के वाद देखावे हैं कि सुहृद जे हितकारी लोग हैं से ब्रह्म में चित्त के वृत्ति के वृत्तिनाम लगी के अर्थे नाना उपमा देखावल है परन्तु मूढ़ लोग ते हमें विवाद करै हैं कि जे निर्गुणोपम नाम गुणा पद उपमा एह से रहित है अथवा जेकरा में निर्गुण अद्भुत उपमा है तेकरा में दोसर कौन उपमा है यही विवाद लोग करै हैं परन्तु उपमा तो चित्त के प्रवेश के अर्थे कहल है ऐहते वाद करनिहार मूढ़ है ॥ ११२ ॥

॥ श्लोकः ॥

अहोवेदान्तशास्त्रस्यनैपुण्यंपक्षवर्जितम् ॥
यत्रेश्वरश्चजीवश्चकर्मब्रह्मचभावितम् ॥ ११३ ॥

॥ अर्थः ॥

अब वेदान्त शास्त्र के बड़ाई करे हैं कि वदान्त शास्त्र के निपुणता ऐसो आश्चर्य है निपुणता कईसन है कि पक्ष वर्जित है नाम कुछ के करो पक्ष न कएल है यत्र नाम जेह वेदान्त में ईश्वर जीव अरु कर्म अरु ब्रह्म इस भावित है नाम निरूपण कैल है एह से पक्ष वर्जित है ॥ ११३ ॥

॥ श्लोक ॥

ये ये मत्साधनेप्रत्ताःसुगमानुभवाहृदि ॥
प्रभुणातइमेसद्भ्योमयापिप्रकटीकृताः ॥ ११४ ॥

॥ अर्थः ॥

अब ग्रन्थ कर्त्ता कहे है कि हमरा साधन करै के समय में प्रभु परमेश्वर जे जे सुगम नाम सुलभ अनुभव हमरा हृदय में प्रत्ता नाम देलन सेह अनुभव हम भी सद्भ्या नाम सतलोग के अर्थे प्रकटो कृता नाम प्रकट कर देलो ॥ ११४ ॥

॥ श्लोकः ॥

कृत्वाकण्ठगताञ्छ्लोकानिमानर्थान्स्मरन्सदा ॥
समाधिजंफलंविज्ञोविनायासमवाप्नुयात् ॥ ११५ ॥

॥ अर्थः ॥

अब एह ग्रन्थ के पढ़ला के फल कहै हैं । के यह ग्रन्थ के स-

भ स्लोक के कपाठ कर के अरु सदा ही सभ के अर्थ के स्मरण कर
हुत विना आयासे समाधि के जो फल हय से विज्ञ नाम विवेकी
अवाप्नुयात् नाम प्राप्त करे ॥ ११५ ॥

॥ श्लोकः ॥

अर्न्तर्ज्ञानीवहिर्भक्तः समयोचितधर्मभाक् ॥
यएवंवर्त्ततेलोकेतेनबुद्धंहरेमर्तम् ॥ ११६ ॥

॥ अर्थः ॥

अब लोक में निवर्हि योग्य उपदेश करे हैं कि अन्तःकरण से ज्ञानी होए नाम संसार के मिथ्या बूझे अरु बाहर भक्त होय नाम परमेश्वर की भजन अरु सेवन करे अरु जो वर्णाश्रम के व्यवहार में समय २ को उचित धर्म आवे से भी करे जो एह प्रकार से लोक में रहे है से हरिनाम परमेश्वर को मति बूझ लक ॥ ११६ ॥

॥ श्लोकः ॥

यथास्वकृपयानाथसर्वतत्त्वंसुबोधितम् ॥
तथाझटितिमेचेतश्चिदानन्दमयंकुरु ॥ ११७ ॥

॥ अर्थः ॥

अब परमेश्वर से प्रार्थना करे है कि यथा नाम जैसे अपना कृपा कर के हे नाथ सभ तत्व रउरा बुझा देतो तइ सही अब झटति नाम शीघ्र हमर चित्त चिदानन्द मय कर दिहु ॥ ११७ ॥

॥ श्लोकः ॥

अज्ञानात्तवकर्तृत्वेभगवन्ममतांव्यधाम् ॥
भुक्तंफलंमयातस्यस्वीयंस्वीकुरुपाहिमाम् ॥ ११८ ॥

॥ अर्थ ॥

पुनः प्रार्थना करैं हैं कि हे भगवन् राउर कर्तत्व सें नाम राउर कैल जे संसार है तेह में हम अज्ञानता से अपन ममता विधान कैलौ नाम हमर इ सभ वस्तु है अइसन बुझलौ तेकर फल हम भोग कैलौ नाम एहौ से बद्ध होके अनेक जन्म दुःख भोगलौ अब स्वीयं नाम अपन जे है समस्त वस्तु सो राउरा को कृष्ण नाम अपनौ लिहु अर्थात् अब हम एह में ममता छोड़ लौ राउरा अपन ले लिहु अरु अब हमरा पाहि नाम रक्षा करु नाम अनेक जन्म दुःख से पृथक करके अपन शरण दिहु ॥ ११८ ॥

इति श्री राघवपुरवासि श्रीमद्विविख्यातविद्वज्जनगणाग्रगण्य श्री धर्मदत्त मिश्रात्मज श्री महात्मानन्दमिश्र सुतगणेशानन्द मिश्र विरचितं सिद्धान्तशतकम् संपूर्णम् ॥

शुभ गंग बिहटाईश दक्षिण दिव्य नाम राघव पुरी ॥ जंह विप्रवृन्द विशेष विद्या नीति रीति सभहीं धरै ॥ तंह नाम विश्रुत एक रइयुत मिश्र अन्त आनन्द जो ॥ सोई लोक हित एह ग्रन्थ विरच्योपूर्ण ज्ञान मकरन्द जो ॥ सुत ताहो मिश्र अनन्त तेहि के अर्थ कछु भाषा करी ॥ सिद्धान्त भाषा प्रकाशिका तेहि नाम ज्ञान अगारै भरी ॥ सुनु धोर सज्जन मूढ़ तामस विप्रवर्णित ग्रन्थ को ॥ जानौं कछु अल्प मति अर्थ हम रचि अल्प मति जन हेतुको ॥ नहि वेद जानौं श्रुति न जानौ स्मृति न कछु विज्ञान को ॥ बिनुबोध कपट वचन कियो विज्ञ जन हास को ॥ करिहास सज्जन क्रोध अक्षर परि छवि देहु आय समूढ़ को ॥ जेहि ते कृतारथ होइ जावौं रामपदतरु मूल को ॥ बिनु राम पद तल छांह बैठे विषय जात नभागई॥बिनु सन्त आयसु कबहुं नहिदृढ़ रामपदमनलागई।

॥ दोहा ॥

अब विचार शिव राखि कै भाषा कियो समान ।
यथा बुद्धिबल बूझि कै राम बास विश्राम ॥
भृगु राम कृष्ण वाराह नर हरि मत्स्य आदि अवतार जी ।
सब सिद्ध देवी सकल सुर गण ब्रह्म रुद्र सब योगी जी ॥
यह बार २ शिर नाइ २ वर चहय सौ मोहि दीजिए ।
निज भक्त मानी सङ्ग सेवा दिव्य तत्व उर भासिए ॥
जग व्याप्त विष्णु पदाब्ज बन्दौ बद्ध भव भ्रम जाल सो ॥
अघ-पाशि-काटि कृपा चिते हरि जानि लेहु निज दास सो ॥
रस पृथ्वी ग्रह चन्द्र मा युत सम्वत वृष मास ।
धवल पक्ष तिथि सूर्य को सोम दिवस प्रकाश ॥
प्रात समय यह ग्रंथ को किये समाप्त विचारि ।
मननन करत याको सदा लहै अवस्था चारि ॥

यस्माद्विश्वमिदंमहत्प्रवहतिह्यन्तेचयस्योदरे
सर्वंतिष्ठतिसावकाशमधुनायेनस्वसंरक्षितम् ॥
भक्तायत्कृपयाभयंभवभवंस्वप्नेपिपश्यन्तिनो
पातान्तच्चरणौसदाममगतीमान्तारमेतामरम् ॥

इति श्री राघवपुर वास्यनन्त मिश्र विरचिता
सिद्धान्तभाव प्रकाशिका सम्पूर्ण ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ दृष्टान्तरत्नाकर ।

नज्ञानंस्फुरतीहसक्तमनसां शङ्काकुलस्वात्मनां
शास्त्रैर्यद्यपिवोधयन्तिकृतिनस्तत्तत्कथाभिःपुरा ॥
दृष्टान्तेनविनास्थिरंनतद्हृदयेतत्वंविविच्येत्यहं
कुर्वेतत्सुखलब्धयेसुकृतिनांदृष्टान्तरत्नाकरम् ॥ १ ॥

सुखेसुखंनजानीयाद्दुःखेदुःखंतथातयोः ॥
संज्ञातास्तुविजानीयाद्यदीच्छेद्विभुतांलघु ॥२॥

वेदोक्तमेवकर्त्तव्यंपंभिः स्वार्थप्रसिद्धये ॥
यथास्थिताः पितुर्वाक्येबालकाः सुखभागिनः ॥३॥

सुखंक्वापिनजीवानांभगवद्विमुखात्मनाम् ॥
यथानृदेवचौराणांस्थितिः शङ्कितचेतसाम् ॥ ४ ॥

यथादलादिभिर्हीनाः द्रुमाः संयान्तिदुर्गतिम् ॥
तथासुकर्मभक्त्यादि रहितानीरसानराः ॥ ५ ॥

नशोभतेयथावृक्षः पत्रपुष्पफलैर्विना ॥
तथासुकर्मसद्भक्तिविज्ञानरहितानराः ॥ ६ ॥

नश्वेतीक्रियतेवस्त्रंविषक्तंमलतैलकैः ॥
शीघ्रंयथातथाचित्तंविषयैर्मलिनीकृतम् ॥ ७ ॥
यथाझटितिरज्यन्तेवस्त्राणिविमलानिहि ॥
तथाहिविमलंचित्तंगृह्णातिभगवद्गुणान् ॥ ८ ॥
सुकर्म्माचरणात्क्षिप्रं प्रसीदतिमतिर्यथा ॥
नगुप्ततत्वमेतद्धिप्रभातस्नानशीलिनाम ॥ ९ ॥
इहैवस्वर्गजंसौख्यंलभन्तेकृतिनःस्फुटम् ॥
नानापुष्पादिभिर्नित्यंभगवत्पूजकायथा ॥ १० ॥
इहदुःसङ्गजोहर्षः परत्रतुसुसङ्गजः ॥
यथासिकतिलोदेशः प्रावृट्कालेसुखप्रदः ॥ ११ ॥
ऐहिकं न सुखंभव्यंभव्यमामुष्मिकंसुखम् ॥
यथेहवाल्यकौमाराद्यौवनस्थंचिरंवरम् ॥ १२ ॥
स्नेहवांस्तप्यतेतापैर्न निः स्नेहःकदाचन ॥
यथाहिघृततैलाक्तावर्तिकादीप्यतेऽग्निना ॥ १३ ॥
अहोज्ञतानृणांचित्रायतस्वयंसुखरूपिणाम् ॥
प्रवर्त्ततेवहिर्वृत्तिर्यथासुधनिनांकृषौ ॥ १४ ॥
अहोस्थितेसुखेप्यन्तर्दह्यन्तेचिन्तयाजनाः ॥
यथैवशैवलच्छन्नकासारेज्ञाः पिपासया ॥ १५ ॥

मनः कृतंसुखंदुःखंनामभातिनवास्तवम् ।
यथादुःखेसुखीशूरोसन्तोषीविकलः सुखे ॥ १६ ॥
क्वचिद्दुःखं सुखं नामाजातिभेदेपिदृश्यते ॥
सुगन्धरमतेभृङ्गोदुर्गन्धेमक्षिकायथा ॥ १७ ॥
नवास्तवं सुखं दुःखंशैशवेयौवनेसुखम् ॥
यथाहिपठनंदुःखंविभात्यनाङ्गसम्भवम् ॥ १८ ॥
सात्विकेशुद्धचित्तानामितरेषान्तुराजसे ॥
सुखेसुखं यथाचस्रैशर्वर्य्यांसाधुचौरयोः ॥ १९ ॥
सात्विकेरमतेविद्वानविद्वान्राजसेसुखे ॥
यथा पद्माकरेहंसाः मण्डूका ग्रामगर्त्तके ॥ २० ॥
पूर्व्वकर्मानुगान्भावाननुतिष्ठन्तिजन्तवः ॥
ननवाननुवर्तन्तेजातिरूपादिकान्यथा ॥ २१ ॥
स्वभावःसर्वभूतानांयोनिवीजानुसारजः ॥
यथाहिवृश्चिकादीनांनशिक्षागुरुशास्त्रजा ॥ २२ ॥
सामीप्यमहतांचित्तमवश्यंविशदंलघु ॥
विचारययथातारेजान्हव्याःकीदृशंमनः ॥ २३ ॥
नचित्तंसज्जतेदुःखेसुखेचाविमलात्मनाम् ॥
यथाजलेमलेवापिकदापिविमलंनभः ॥ २४ ॥

अहोविमूढता हेत्वङ्मांसरुधिराञ्चिते ॥
रतिर्नृणांशुनांशुष्कयथास्थानिविदृश्यते ॥२५॥
वासनावलितोजीवःसैषतद्रहितःशिवः ॥
यथातमः प्रकाशाभ्यां कालोरात्रिंदिवाभिधः ॥२६॥
विद्याविद्यात्मिकेबुद्धीसदसत्सङ्गजेनृणाम् ॥
यथाहिमांशुतीक्ष्णांशुसङ्गाद्वायुस्तथाविधः ॥ २७ ॥
एकस्मादीश्वरात्सर्वंनिःसृतंविविधंजगत् ॥
विभावयथाबीजातपत्रपुष्पफलादिकम् ॥ २८ ॥
शक्तिर्हीश्वरस्येयं जड़चैतन्यरूपिणी ॥
विभावयेतिदुग्धस्ययथादधिघृतात्मिका ॥ २९ ॥
एकस्मिन्मृत्तिकापिण्डेमहामात्रोऽङ्कुशःकरी ॥
यथातथात्रिधाद्रष्टादृग्दृश्यमवगम्यताम् ॥ ३० ॥
ईश्वरादुत्थितंविश्वंकारणात्कार्य्यरूपकम् ॥
विश्वस्माच्चेश्वरः शक्त्यावृक्षाद्बीजंयथास्वजात् ३१॥
एकएवपरःकश्चित्सच्चिदानन्दलक्षणः ॥
विभातिस्त्रीययथाशक्त्याबहुधासमयोयथा ॥३२॥
अज्ञानांहृदयंबहिर्ज्ञानिनामुदकंस्मृतम् ॥
विभावनीयंसर्वस्मिन्स्वभावेसुखलिप्सुभिः ॥ ३३ ॥

सदासङ्गस्वभावस्यचित्तंदुःखैर्नयुज्यते ॥
यथाहितृणवाःपङ्कैःप्रावृट्कालेपिबालुका ॥ ३४ ॥
विषयासङ्गहीनानांनिर्मलंशोभतेमनः ॥
यथातृणाद्यसंसक्ताजान्हवीतीरबालुकाः ॥ ३५ ॥
स्नेहवानशिखेरन्यःप्रकाशंलभतेजनः ॥
प्रकाशयतिलोकांश्चयथादीपः स्वयंगृहान् ॥ ३६ ॥
विवेकेनविहीनानांनैहिकामुष्मिकंसुखम् ॥
यथाविहीननेत्राणांस्वरूपपररूपजम् ॥ ३७ ॥
परमात्मसुखन्त्वन्तर्नैतिष्ठत्यविवेकिनाम् ॥
यथानफलमाधुर्य्यंवकाद्यामिषचेतसाम् ॥ ३८ ॥
उपदेष्टृषुविद्वत्सुवर्तमानेषुसत्स्वपि ॥
नात्मावगम्यतेमूढैर्दुर्ज्जनैः साधुतायथा ॥ ३९ ॥
देहेदृष्टिर्विमूढानांवर्द्धतेनपरात्मनि ॥
यथारात्राबुलूकानांप्रकाशेचान्तरेनतु ॥ ४० ॥
देहेहंकारवानात्मासुखीदुःखीचनस्वतः ॥
प्रतीयतेयथातातः पुत्रेसुखिनिदुःखिनि ॥४१॥
नज्ञानंनापिविज्ञानंविनासत्सङ्गतोभवेत् ॥
यथापुंसश्चतुष्टिश्चनर्तेदाधिकृतान्नृणाम् ॥ ४२ ॥

असाध्यंनमनःशुद्धिकरणंसाद्भिरिच्छताम् ॥
यथाशरीरवस्त्रादिनिर्मलीकरणंजलैः ॥ ४३ ॥
युक्त्योपलभ्यनेस्वात्मासाक्षात्सत्सङ्गलब्धया ॥
निराकारोपिपूर्णोपिव्यजनेनयथानिलः ॥ ४४ ॥
आत्मासर्वत्रपूर्णोपिभासतेहृदयेमले ॥
यथादर्शेजलेस्वच्छेप्रतिविम्बः प्रकाशते ॥ ४५ ॥
आत्मनोनिर्गताबुद्धिर्विषयैः परिचाल्यते ॥
यथाभुवः पृथग्भूताधूलीवातैर्वशीकृता ॥ ४६ ॥
चिदानन्दरसश्लिष्टाबुद्धिस्तापैर्नहन्यते ॥
यथोदकरसक्लिन्नाधूलीबातैर्नधूयते ॥ ४७ ॥
चित्स्वरूपात्मनोबुद्धिर्निर्गताबहुरूपिणी ॥
सञ्जातातत्स्वरूपैवभुवोदृश्यमिदंयथा ॥ ४८ ॥
विचित्रेश्वरमायेयंशक्तिर्बुद्धिस्वरूपिणी ॥
उदेतिबहुधाप्येतियथाकाशेसमीरणः ॥ ४९ ॥
यायाशक्तिर्महाकाशेसासाचाल्यमठस्थिते ॥
यथातथेश्वरेजीवेसद्भिः सम्यग्विभाव्यते ॥ ५० ॥
यथास्त्रीपतिनिर्भेदोरात्रौसर्वजनोदिवा ॥
विभर्त्तिवहुधाभेदंतथाप्रलयजन्मनोः ॥ ५१ ॥

बुद्धिरेकैवदुःखाय सुखायां पिचदृश्यते ॥
पाक विभेदेन यथान्धोद्विविधायते ॥५२॥
शत्रुमित्र महन्मूर्ख भेदाबुद्धिर्न्नचात्मनः ॥
यथावालकुमारादि भावादेह यनोधियः ॥५३॥
एकैवबुद्धिर्वहुधा गुणकर्म्मविभेदनः ॥
भातिच्छिद्रविभेदेन यथा शब्दःसहस्रधा ॥५४॥
एक धानेकधेवात्मा सर्वजन्तुषु राजते ॥
यथा क्षरार्थभेदेन पदेषु वहुधाध्वनिः ॥५५॥
माया मायेति जल्पन्तिनतां जानन्ति केचन ॥
अंतेस्वरूपस्मरणाद्यथादुःखंसुखंविना ॥५६॥
द्रष्टव्या रामलीलेयं नस्मर्त्तव्यासुखेप्सुभिः ॥
स्मर्त्तालिप्सुः सदादुःखीनद्रष्टादृश्यते यथा ॥५७॥
नदोषोवक्रजीवानां रजसादूषितात्मनाम् ॥
व्यञ्जनानां सुभव्यानामौत्कटचेलवणेयथा ॥५८॥
विनेश्वरंस्थितां बुद्धिंगत्वारागादयः खलाः ॥
क्षिप्रं यथापलायन्त जारःदृष्ट्वाथतत्पतिम् ॥५९॥
श्रुत्वा सर्वाणिशास्त्राणि पीत्वातत्सारजरसम् ॥
ततोविसर्ज्जनीया नियथाम्रादि फलानिहि ॥६०॥

कृत्वावेदोक्त कर्म्माणिबुध्वातत्त्वंतदीशितुः ॥
स्वतन्त्रोविहरेत्पित्रादत्तराज्योयथासुतः ॥६१॥

सदाभगवतोवाञ्छाभक्तानामृद्धिसिद्धये ॥
स्वतोपिचसुपुत्राणामधिकर्द्धयैपितुर्यथा ॥६२॥

नात्रशङ्काधिकर्त्तव्याभक्ते प्रीतिस्स्वतोधिका ॥
स्वांशेयदीश्वरस्यैवंभक्त पुत्रेपितुर्य्यथा ॥६३॥

निराकारोपि पूर्णोपि भक्तवाञ्छा प्रसिद्धये ॥
आविर्भवतिसाकारः परमात्मानलोयथा ॥६४॥

पुष्पंवृन्तंफलंपश्चान्माधुर्य्यं क्रमशोयथा ॥
तथासुकर्म्मसद्भक्तिर्ज्ञानमानन्दसम्भवम् ॥६५॥

क्षीरेग्नियोगेमाधुर्य्यं यथागाढ़विलोडनात् ॥
तथाह्यात्मवोधेपिध्यानादानन्दसम्भवः ॥६६॥

सर्वत्रगच्छतिनचापियथाघटस्थं-
सर्वत्रपूर्णममलंगगनं प्रशान्तम् ॥
तद्वद्विभावयमनस्य निशंशरीरे-
लोकेषुगच्छतिनगच्छति जीवतत्त्वम् ॥६७॥

यथाहिरत्नाकरतः सुरत्ना-
न्यादायहारं दधती हविज्ञाः ॥

कण्ठे तथास्मात्परि गृह्यबोध-
रत्नानिसन्तोमुदमाप्नुवन्तु ॥६८॥
नीत्वासद्बोधरत्नानि बुद्ध्वाध्यानं चिदात्मनः॥
स्वतन्त्राः सज्जना लोके विहरन्तु महामुदः ॥६९॥
एतस्माद्भगवान्विष्णुरीश्वरःपरितुष्यतु ॥
विद्वज्जनोपकारायगणेशानन्दनिर्म्मितात् ॥७०॥

इति श्रीपरमहंस-पूज्यपाद १०८ श्री पं० गणे-
शानन्द मिश्र कृत दृष्टान्त
रत्नाकरः सम्पूर्णः ॥

श्रीगणेशायनमः।

निवासोगगनग्रामे शुद्धबोधोस्तिनाममे ॥
सजातीय विजातीयस्वगतैरुज्झितोऽगुणः ॥१॥
यो बोधः सर्वलोकेषुव्याप्त एको निरञ्जनः॥
सोऽस्मिमिथ्या भ्रमोन्य द्यन्नामरूपादकं जगत् ॥२॥
नमदर्थं शरीरं मे न च सर्व मिदं जगत् ॥
चिन्मयस्य विजातीयैः किमेभिः संभ्रमो भ्रमैः ॥३॥

ज्ञानमात्र स्वरूपस्य किं मेऽन्यस्मरणादिभिः ॥
सत्यस्यसुखरूपस्य मोहकैरनृतैर्भ्रमैः ॥ ४ ॥
अत्याश्चर्यमिदं नित्यं भासमानं निरन्तरम् ॥
शुद्धबोधमयं ब्रह्म यज्जनैर्नावगम्यते ॥ ५ ॥
भास्करादधिकं शान्तं बहिरन्तः प्रकाशकम् ॥
सर्वलोकगतं ज्ञानं ब्रह्मकिन्नावगच्छथ ॥६॥
विदांकुरुत विद्वांसः परमाणमयैर्भ्रमैः ॥
देहैः किमावृतंज्ञानं किं वा पूर्ण मनावृतम् ॥७॥
योग्यता परमाणूनां दृश्ये सर्वत्र दृश्यते ॥
तथाप्य हो विमूढानां भ्रमंबोद्धुंन धीःक्षमा ॥८॥
बुद्ध्वाबोधमयं ब्रह्मद्वैताध्यानसनिवृत्तये ॥
विस्मरेत्सर्वथा शब्दांस्त्रीनिदंयुष्मदस्मदः ॥९॥
य आनन्दः स्थितोबाल्ये सच्छन्नो लोक चिन्तया ॥
विवेकेन विरागेणच्छित्वातां तं समुद्धरेत् ॥१०॥
यथा यथा स्वरूपस्य शुद्धबोधस्य संनिधिः ॥
तथा तथा मृषादृश्यं गगनस्येवनीलिमा ॥११॥
यथाहं भावनाबोधे दृश्येषु भ्रमभावना ॥
सिद्धास्वाभाविकानित्या न ततोऽपिपरोऽपरः॥१२॥

ज्ञानं गुरुमुखाच्छास्त्रादिदंस्त्रानुभवान्मया ॥
निश्चितं नपरंतत्त्वं शुद्धबोधादपि क्वचित् ॥१३॥
नापरःपरमात्मात्पूर्यैवेदान्तोऽल्पो पदेशतः ॥
अस्मात्तस्मादयंनाम्ना राजतामात्मदर्पणः ॥१४॥

इति श्रीमद्राघवपुरवासि परमहंस गणेशानन्द-
विरचित आत्मदर्पणः समाप्तः शुभम् ।

अथ प्रश्नोत्तराष्टकम् ।

कालीला यस्य लीलेयं सकः कुत्र विराजते ॥
के वयं जन्मनाशाभ्यां सम्भ्रान्तास्तद्गुरोवद ॥१॥
कर्त्ताबोधमयः पूर्णोविश्वदेहोऽस्त्यनादिमान् ॥
मृषा लीला मृषा यूयं मृषा जन्म मृषा मृतिः ॥२॥
यदा गुरोमृषा सर्वं कर्त्ताबोधमयोयदि ॥
तदा कथन्नजानन्ति सर्वे सर्वमिदं जगत् ॥३॥
वेत्तिबुद्धिर्नवाबोधः समष्टिव्यष्टिभेदतः ॥
सा द्विधातोनजानन्ति व्यष्टयोजीवसंज्ञिकाः ॥४॥
गुरो कश्चिदुपायोस्तिसम्भ्रमाणां निवृत्तये ॥
मृषापि दुःखिनोव्यग्राभवेम सुखिनःकथम् ॥५॥

सदासमष्टयधीशस्यशुद्धबोधस्यसंस्मृतिः ॥
तथाऽनित्यविचारेणदृश्यमात्रस्याविस्मृतिः ॥६॥
सर्वदाविषयैर्दृश्यैर्त्रयं कल्याणिनो गुरो ॥
यथा जलेनवैमीनाः कथंतद्विस्मृतिःस्थिरा ॥७॥
सर्वथातत्परित्यागे दृष्टान्तोभवतांपरः ॥
परंचपङ्कजंतत्र यथायूयं तथास्तवै ॥ ८ ॥
प्रश्नोत्तराष्टकंह्येतद्भवामयनिवर्त्तकम् ॥
समस्तशास्त्रहृत्तत्त्वं द्वैताद्वैतसमर्थकम् ॥ ९ ॥

इति श्रीप्रश्नोत्तराष्टकं सम्पूर्णम् ।

जिज्ञासवोनलोकेद्य स्वल्पविज्ञानशाइह ।
शिरःपीडाकरास्सर्वे मौनमत्र युगेवरम् ॥१॥
सुप्तोनजाग्रतंवक्ति नच तं सोऽपिवायथा ।
तथैव व्यवहारोऽयमनुरक्त विरक्तयोः ॥२॥
सत्येस्वरूपचैतन्ये विस्मृते क्लेशभागभूः ।
सदातदेव संस्मृत्य स्वरूपसुखभाग्भव ॥३॥
मिथ्या संसाररागेण चिन्मयोमृण्मयोऽभवः ।
सत्यस्वरूपरागेण मृण्मयश्चिन्मयोभव ॥४॥

यत्रयत्रमनोयाति तत्तत्त्विरिढधियास्त्रयम् ।
मृतेविभोजनेनस्मिन् शत्रुजिच्चिद्गृहेवस ॥५॥

विस्मृत्य नामरूपंस्वं तथा लोकस्यचिन्तनम् ।
तदाभवासिधाद्दृक्त्वं सोऽसितद्भवसर्वदा ॥६॥

यावन्नदृश्यमात्रस्य स्त्रवपुःप्रमुखस्यतु ।
अभावनिश्चयश्चित्तेतावज्ज्ञत्वं सुदुर्लभम् ॥७॥

सप्तश्लोकीद्वितीयेयान्निर्गतामनसोबलात् ।
मौनभावेऽपिवक्तास्या नजानेकोऽस्तिनिश्चयम् ८।

इतिश्रीमत्परमहंस गणेशानन्द विरचिता
द्वितीय सप्तश्लोकी समाप्ता ।

यदादृश्यपदार्थानामन्तः सर्वत्रस्वंस्थितम् ।
तदाकिं स्वमृतेऽर्थत्वं पदार्थानाम्वदस्थितम् ॥१॥

यदा दृश्यमिदंसर्वं स्वमात्रंदृश्यतेसदा ।
तदा तत्रावधानेन चिदानन्दंविभावयेत् ॥२॥

दृढभावनयादृश्यं चिन्मयं प्रथमम्भवेत् ।
तदानन्दमयंसर्वं षण्मासैस्तुप्रजायते ॥३॥

अतोविवेकिनाधार्य्यं तत्वे चित्तन्निरन्तरम् ।
पशुवद्विषयेनैव यतोदृश्यमिदंमृषा ॥४॥

यथा ये ये घटा नष्टाः पुनस्तेते कदाचन ।
भवन्तितद्वज्जीवनाम्मुक्तानाम्बिद्धिनिर्णयम् ॥५॥
अलं शास्त्रसमानाम्बिदुषञ्चापिभाषणम् ।
दूरे गगनमायाते द्वैताङ्कन्नामकथ्यते ॥६॥
मनसःशोधनार्थन्तु शास्त्रंसर्वम्महात्मभिः ।
कथितन्नतुसत्यार्थं द्वैतस्येतिविभावय ॥७॥

इतिश्रीमत्परमहंस गणेशानन्द विरचिता
सप्तश्लोकी समाप्ता ।

ज्ञानमात्रस्य पूर्णस्य न शक्त्याश्रयस्यमे ।
अहो अत्यद्भुतालीला जगद्रूपाविवर्त्तते ॥१॥
परमाणुमयेलोके मत्याभासेऽप्यहोस्पृहा ।
स्वप्रकाशस्वमध्यस्थ चिदानन्दस्यमेवृथा ॥२॥
तर्हिधिग्बुद्धिनैपुण्यं मत्याभासे भवेयदि ।
परमाणुमयेप्रीतिः कृत्वा मत्यपराभवम् ॥३॥
स्वानन्दं बिषयाकारं भान्तंभुङ्क्तनपश्यति ।
अहोमृषपृथक् मत्वामीदानिवैजनः ॥४॥
किं मृषादेहसंस्कारैः शास्त्राभ्यासैर्जपैश्चकिम् ।
चिन्मयं विष्णुमज्ञात्वा मृषावस्तुषुचद्रतिः ॥५॥

विज्ञानपञ्चकस्यास्य भावार्थमननाज्जनः।
लभते परमात्मानं निधानमिव सद्मनि ॥६॥

इतिश्रीमद्राघवपुरनिवासि परमहंस
गणेशानन्द विरचितं विज्ञान-
पञ्चकं समाप्तम्।

शुद्धबोधोऽस्मिपूर्णोऽस्मिसदानन्दोऽस्मिनिर्मलः।
निरपेक्षोऽस्मिदृश्येषुमदाभासेष्वसत्स्वहम् ॥१॥
यत्सत्यं त्रिषुकालेषु देशेषु सकलेषुच।
सर्वावस्थास्वनुस्यूतं तदहंज्ञानमव्ययम् ॥२॥
यद्यद्विनाशि देहाऽदिं यद्यदस्तिविनाशकृत्।
नतैर्म्ममसतःस्पर्शश्चिन्मयस्यानिशकृतेः ॥३॥
जानामिकर्म्मकर्त्तारम्भोक्तारमभिमानिनम्।
भोग्यञ्चभङ्गुरंसाक्षीबोधोहमुभयोःपरः ॥४॥
बोधातिरिक्तं मिथ्यैव सर्वमाभासमात्रकम्।
विभाति विहतं तस्माद्बोध एवपरम्पदम् ॥५॥
जीवाश्चलौकिकी वाचोव्यवहाराः परेचये।
मृषापरम्पराभ्यासाद्भ्रान्तिबोधबलेनते ॥६॥

यावन्न चाश्रयं बोधं बुद्ध्वालौकिकसम्भ्रमात् ।
निर्वर्तेतानिवर्त्तेत नतावत्कोऽपिकेनचित् ॥७॥

इतिश्रीमत्परमहंस गणेशानन्द विरचिता
यथार्थानुभूतिः समाप्ता ।

किमज्ञानं कुतोऽज्ञानं कस्याज्ञानं किमाश्रयम् ।
एवमज्ञानमज्ञानाद्भिन्नंविज्ञकुरुष्वमाम् ॥१॥
त्वमज्ञानं तवाज्ञानं त्वत्तोऽज्ञानंत्वदाश्रयम् ।
त्वम्मत्वाचित्स्वरूपेण स्वस्थोविज्ञोभवाऽधुना ॥२॥
स्वेनैवमनसाविद्धिकौमारेयौवनेऽद्यते ।
बुद्धेर्विपरिवर्त्तोवातववाऽस्तिचिदात्मनः ॥३॥
यस्त्वंषाण्मासिकोमन्दःसैवाऽन्योवाबुधोऽद्युना ।
किं मृषामर्शनेव्यग्रः स्वान्तस्थशरणंव्रज ॥४॥
अचिन्तया स्वया शक्त्या विद्याऽविद्यास्वरूपया
भगवान् बहुरूपोऽयं क्रीडतीति विभावय ॥५

इतिश्रीमत्परमहंस गणेशानन्द विरचितो
विज्ञानदीपः समाप्तः ।

शुद्धाशुद्धपत्रम् ।

पृष्ठाङ्का	श्लोकाङ्काः	शुद्धम्	अशुद्धम्
२	२	बुद्ध्वा	बुद्धा
६	१०	स्पृषा	स्पृपा
७	११	छद्मना	छद्मता
८	१४	गुणानां	गुणांनां
,,	,,	रूपै	रूपौ
,,	,,	बोधा	बाधा
१०	१८	भान्ति	भन्ति
१२	२२	तादृक्	तादृक
१२	२३	तृष्णाभं	तृ णाभं
१४	२७	सुत्वभिः	सुताभिः
१७	३१	हृषाकैर्वा	हुषाकैर्वो
१८	३५	स्वप्नेन	स्वप्ने
१९	३८	गतौ	ज्ञातौ
,,	,,	बुद्धार्थं वि	बुद्ध थं वि
,,	,,	तत्त्वेण	तत्वेण
२०	३९	विधाः	विधः
,,	,,	प्रादु	प्रदु
२०	४०	शङ्करं	शंङ्करं
,,	,,	भिधेषु	निधेषु
,,	,,	चयम्	चपम्
२०	४१	विधेन्द्रियार्थेषु नघेदं	विधोन्द्रियेपेषुतघेदः
२१	४२	यद्यद्व	पद्यद्व
,,	,,	दृक्	दृक
२२	४४	मान्त्वन्तु	मान्व्वुतु
४२	८८	सर्वंभाये	सर्वंमाये
,,	,,	वाग्भिः	वाभ्भिः
४२	८९	द्रष्टा	दृष्टा
४४	९३	ज्ञानं	ज्ञान
४४	९४	स्थिरम्	स्थुरम्
४५	९५	पश्वा	पश्व
४६	९८	चणे	चंणो

पृष्ठाङ्काः	श्लोकाङ्काः	शुद्धम्	अशुद्धम्
४६	९८	दुःखं	दुंख
४९	[illegible]	लाञ्छो	लांछो
५२	११२	नाना	नना
५३	११५	गताङ्छो	गताऽछो
५४	११७	सर्वं	सर्व
५६	११९	नैव	नव
५७	२	ज्ञातारं	धंज्ञातारं
५८	१३	स्नेहः	स्नहः
५८	१४	यथा	थथा
५९	१७	नामजाति	नामाजाति
"	"	सुगन्धे	सुगन्ध
५९	२०	सुखे	सुखै
६०	२८	दौस्वरात्	दास्वरात्
६०	२९	स्थेयं	स्थेय
६०	३०	स्तुतिका	स्तुतिको
६०	३२	स्वीयया	स्वीययया
६१	३५	वालुका	वलुका
६१	३७	पिहोना	वहना
६१	३९	गम्यते	गम्येत
६१	४०	बुभुक्षा	बुक्षा
६२	५६	जल्पन्ति	जल्पन्ति
६३	६०	सारङ्गं	सारङ्गं
६४	६५	संभवः	संभवम्
६५	१	कविभक्तो	कविफतो
६६	७	परमाणु	परमाण
६७	१४	क्षात्य	क्षात्यये
६७	४	जानन्ति	जनन्ति
७०	६	समूहा	समहा
"	"	द्वैतद्धि	द्वैताद्धि
७०	४	भुङ्क्ते	भुङ्क्त
७१	६	लभेत	लभते